ग्यारहवां अंक

वर्ष 6 संख्या 1
जनवरी-जून, 2024

कृषि-जीवन

(किसान मेला विशेषांक)

बुन्देलखण्ड कृषि इन्द्रधनुषी क्रांति की ओर अग्रसर .....

"टिकाऊ विकास के लिए पुनर्जीवित कृषि"

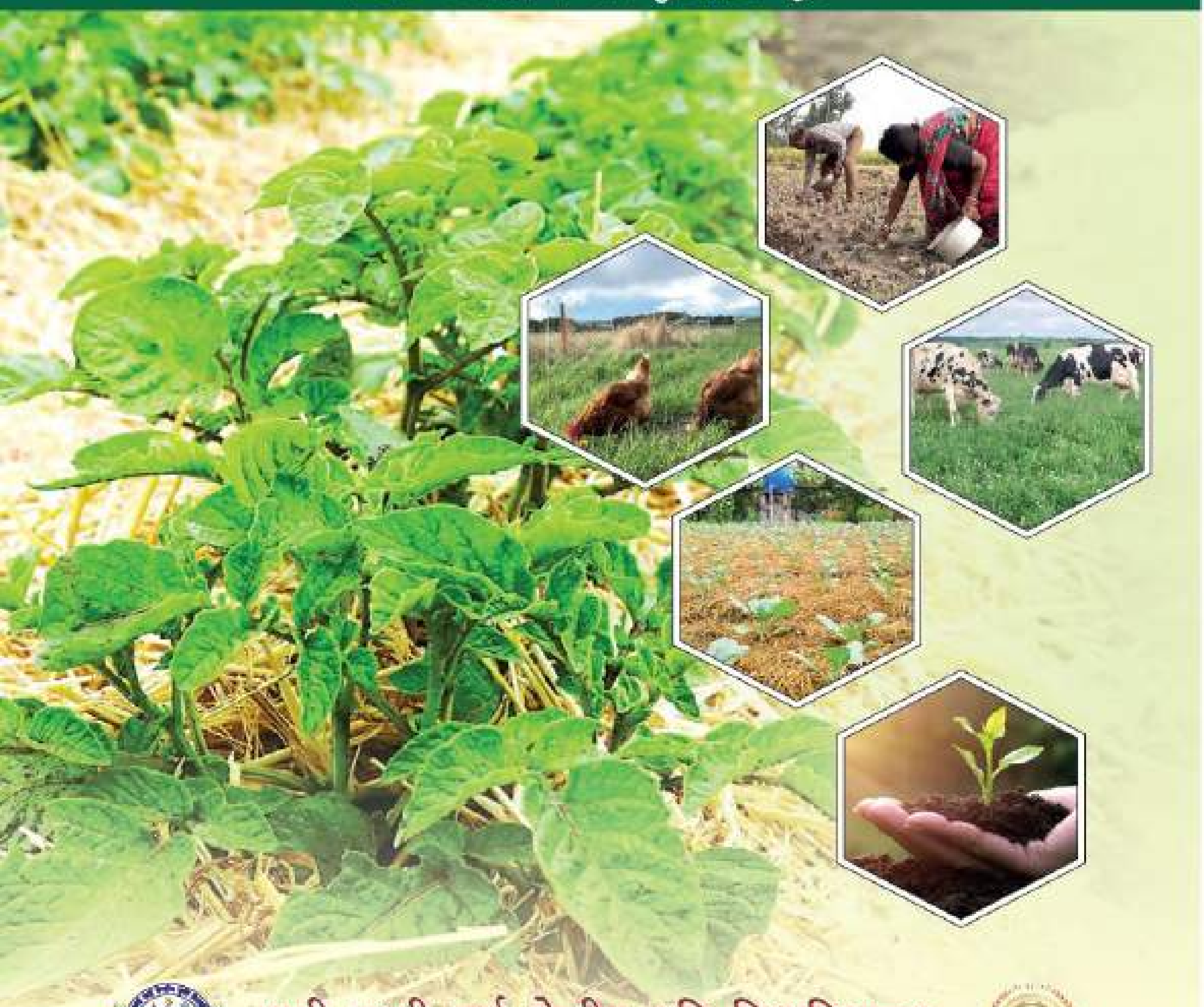

रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय
झाँसी-284003 (उ.प्र.) भारत

कृषि-जीवन

वर्ष 4 संख्या-1
जनवरी-जून, 2024

संरक्षक
डॉ. अशोक कुमार सिंह
कुलपति

मुख्य संपादक
डॉ. अनिल कुमार
(निदेशक, शिक्षा)

संपादक
डॉ. मनमोहन जे. डोबरियाल
(अधिष्ठाता, उद्यानिकी एवं वानिकी)

सविशेष संपादक
डॉ गोविंद विश्वकर्मा
(शिक्षण सह अनुसंधान सहयोगी, फल विज्ञान)

संपादक सलाहकार
डॉ. आर. के. सिंह
(अधिष्ठाता, कृषि संकाय)
डॉ. एस. के. चतुर्वेदी
(निदेशक, शोध)
डॉ. एस. एस. सिंह
(निदेशक, प्रसार शिक्षा)
डॉ. मुकेश श्रीवास्तव
(कुलसचिव)
डॉ. कुसुमाकर शर्मा
(सलाहकार)

संपादक मण्डल
डॉ. गौरव शर्मा
डॉ. राकेश चौधरी
डॉ. शुभा त्रिवेदी
डॉ. मनीत राणा
(भा. चा. एवं चा. अनु. सं., झाँसी)

पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखकों के अपने निजी है। संपादक, प्रकाशक की सहमति और उत्तरदायी होना अनिवार्य नहीं है। लेख में लेखक का पूरा पता प्रकाशित किया जाता है। अतः कोई भी जानकारी लेखक से ली जा सकती है।

निदेशक
ई-मेल: directoreducation.rlbcau@gmail.com

अनुक्रमणिका

कुलपति जी की कलम से
संपादकीयः ''टिकाऊ विकास के लिए पुनर्जीवित कृषि''

इस अंक में:

1 बुन्देली मिट्टी के प्रकार एवं अनुकूल फसलें
अमित कुमार सिंह, सुशील कुमार सिंह, अनिल कुमार राय एवं शिव वेन्द्र सिंह

2 बुंदेलखण्ड में जैविक और प्राकृतिक खेती की प्रचुर संभावनाएं
नीतू सरोज, संदीप कुमार, अमन कुमार मौर्य, लक्ष्मण

3 उद्यानिकी में निवेश से होगा बुंदेली धरा का परिवर्तन
गौरव शर्मा

4 पुनर्योजी कृषि का भविष्य एवं संभावनाएँ
शिखर कुमार

5 जीरो बजट खेती एवं अन्य पुनर्योजी खेती की विधियां
अनिल कुमार राय, योगेश्वर सिंह एवं शिव वेन्द्र सिंह

6 जैविक एवं प्राकृतिक खेतीः एक आदर्श कृषि तकनीक
धीरज पाटीदार, थ्रम्बो तायु एवं नीतू सरोज

7 एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधनः मृदा पोषण में प्राकृतिक एवं नवीन विधियां
यूमनाम बीजीलक्ष्मी देवी एवं थौनौजम थॉमस मीतेई

8 एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन में जीवाणु खाद की भूमिका
प्रियंका चंद्रा, पारुल सुन्धा, निर्मलेंदु बसक एवं अरविन्द कुमार राय

9 जल संरक्षित खेती वर्तमान कृषि की आवश्यकता
संदीप उपाध्याय

10 सतत मृदा स्वास्थ्य में मृदा संशोधन की महत्वपूर्ण भूमिका
थौनौजम थाफमस मीतेई एवं यूमनाम बीजीलक्ष्मी देवी

11 जहरीले रसायनों के बढ़ते प्रचलन में नियंत्रण आवश्यक
गुंजन गुलेरिया, अनुसुइया पांडा, योएगश्वर सिंह, शिव वेन्द्र सिंह, गरिमा, वनपला आलेख्या, प्रवीण एच, पुसूलरी पवन, अंकुश राज

12 जलवायु अनुकूल कृषि के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी का दोहन
पीयूष बबेले

13 सूक्ष्म जीवों की प्रचुरता से ही मृदा जीवाश्म में बढोत्तरी
उमेश पंकज

14 कृषि नवाचार
गोविंद विश्वकर्मा

प्रकाशक : शिक्षा निदेशालय,
रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी-284 003 (उ. प्र.) भारत
कापीराइटः रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी

कुलपति जी की कलम से .... ✍

भारतीय अर्थव्यवस्था दुनिया की शीर्ष अर्थव्यवस्थाओं में पाँचवें स्थान पर है। देश की अधिकांश अबादी अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। कृषि क्षेत्र, देश के कुल सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 15% का योगदान देता है। भारत में कृषि, देश की अर्थव्यवस्था और समाज में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जिसमें 50% से अधिक आबादी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है, जिसमें 86% छोटे किसान हैं। वर्तमान में कृषि जलवायु परिवर्तन, मिट्टी की उर्वरता कमी और पानी की कमी जैसी गंभीर चुनौतियों से प्रभावित है। बड़े पैमाने पर एकल कृषि प्रणालि और व्यापक भूमि क्षरण की विशेषता वाली कृषि प्रणालियों ने पर्यावरणीय क्षरण, भूमि क्षरण, जैव विविधता हानि और जलवायु परिवर्तन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। जैसे-जैसे भारत की जनसंख्या बढ़ती जा रही है, फसल और खाद्य सुरक्षा तथा लाखों लोगों के लिए आजीविका सुनिश्चित करना सर्वोपरि है। पुनर्जीवी कृषि, एक परिवर्तनकारी टिकाऊ व समग्र दृष्टिकोणयुक्त कृषि के रूप में उभरी है जिसका उद्देश्य न केवल खाद्य उत्पादन को बनाए रखना है बल्कि धरती/भू-जलवायु के स्वास्थ्य एवं सुरक्षा को बहाल करना और पुनर्जीवित करना भी है। यह मान्यता है कि पुनर्जीवी कृषि जलवायु परिवर्तन को कम करने, जैव विविधता के संरक्षण, पारिस्थितिकी तंत्र के लचीलेपन को बढ़ाने और सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। मृदा स्वास्थ्य, जैव विविधता संरक्षण, जल प्रबंधन और कार्बन पृथक्करण (सीक्वेट्रेशन) के परस्पर सहयोग एवं संबधों पर जोर देकर, पुनर्जीवी कृषि हमारी कृषि प्रणालियों के सामने आने वाली जटिल चुनौतियों को एक समग्न और एकीकृत समाधान प्रदान करती है।

पुनर्जीवी कृषि ने कृषक समुदायों, निजी क्षेत्र, समाज और सरकार के प्रतिभागियों को सहयोग करने, विचार साझा करने और एक स्थायी और पुनर्जीवी कृषि के भविष्य की दिशा तय करने के लिए एक सार्थक मंच प्रदान किया जो पर्यावरण की रक्षा करेगा और लाखों छोटे कृषक समुदायों की आजीविका में सुधार करेगा। पुनर्जीवी खेती का अधिकांश कार्य कार्बन पृथक्करण (सीक्वेट्रेशन) के आसपास केंद्रित है। कार्बन से भरपूर मिट्टी न केवल स्वस्थ होती है बल्कि बड़ी मात्रा में नमी को बनाए रखने में भी सक्षम होती है। यह कार्बन युक्त मिट्टी पौधों को अधिक मात्रा में पोषक तत्व प्रदान करने में भी मदद करती है। पुनर्जीवी कृषि को बढ़ाने के लिए किसानों, नीति निर्माताओं, शोधकर्ताओं और कृषि मूल्य श्रृंखला के सभी हितधारकों के सभी प्रयासों की आवश्यकता है। विभिन्न प्रथाओं को अपनाकर हम एक सक्षम पारिस्थितिकी तंत्र को बढ़ावा देकर स्थायी भविष्य के लिए पृथ्वी का पोषण कर सकते हैं, जिससे कृषि हमारे पर्यावरण सुरक्षा एवं स्वास्थ्य में महत्वपूर्ण भूमिका दे सकेगा।

कृषि जीवन का वर्तमान अंक, जिसका शीर्षक है **''टिकाऊ विकास के लिए पुनर्जीवित कृषि''** विभिन्न कृषि उत्पादन तकनीकी और विभिन्न नीति विषयक पहलुओं से संबंधित विभिन्न लेखको के विचारों को प्रस्तुत करने के लिए एक प्रयास है। मुझे उम्मीद है कि कृषि जीवन का यह अंक विशेष रूप से बुन्देलखण्ड और सामान्य रूप से देश में पुनर्जीवी कृषि की महत्ता को बढावा देने हेतू प्रोत्साहित करेगा एवं शोध व विकास के लिए नए आयामों पर हम सभी मिलकर कार्य कर सकेंगे।

(अशोक कुमार सिंह)
कुलपति

सम्पादकीय

टिकाऊ विकास के लिए पुनर्जीवित कृषि............

पंच-महा-भूत और फसल स्वास्थ्य के साथ-साथ पोषण के लिए स्थायी समाधानों के साथ कृषि में क्रांति लाना हमारे भविष्य के अस्तित्व के लिए एक लाभकारी तरीका है। इस प्रकार, पुनर्जीवी कृषि को अपनाना, जो खेती की एक व्यापक प्रणाली है, कई प्रकार की कृषि क्रियाओं को जोड़ती है जो विशेष रूप से खराब मिट्टी की जैव विविधता को बहाल करने, मिट्टी के कार्बनिक पदार्थों के पुनर्निर्माण और जल प्रतिधारण और पोषक तत्वों के अवशोषण में सुधार करने के लिए मिट्टी के ऊपरी सतह को पुनर्जीवित करने पर ध्यान केंद्रित करती है। जैव विविधता की निरंतर कमी, मिट्टी के स्वास्थ्य का क्षरण और जलवायु परिवर्तन ने कृषि की दिशा को **''अधः पतन से पुनर्जनन''** की ओर मोड़ना आवश्यक बना दिया है। पुनर्जीवी कृषि मिट्टी के कार्बनिक कार्बन को रोककर जलवायु परिवर्तन को कम करने में भी मदद करती है, जबकि किसानों को उत्पादकता में बढावा और कृषि आय में इजाफा करने में भी लाभदायक है। मूल रूप से, पुनर्जीवी कृषि मृदा को कोई हानि नहीं पहुँचाती, बल्कि इसे सुधारती है, नई तकनीक का उपयोग करके, जो संरक्षित कृषि (नो-टिल, मिट्टी आवरण, फसल विविधीकरण) की प्रथाओं को अपनाने के माध्यम से मिट्टी और पर्यावरण को पुनर्गठित और पुनर्जीवित करती है, खाद/पशु खादों का उपयोग बढ़ाती है, मिट्टी के जैव शक्ति को सुधारने के लिए कृषि खाद का पुनर्चक्रण करती है और विनियमित चराई, मिश्रित फसल/अतःसस्यन आदि पर ध्यान केन्द्रित करना, जिससे पोषक तत्वों से भरपूर और उच्च्य गुणवत्ता बाली फसल का उत्पादन करने के लिए स्वस्थ मृदा बनती है। कृषि महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों-मिट्टी, पानी, वायु, जैव विविधता, आदि की चल रही कमी का शिकार और कारण दोनों है। अच्छे स्वास्थ्य में होने पर, ये प्राकृतिक संपत्तियाँ खाद्य सुरक्षा के लिए आवश्यक उत्पादकता वृद्धि का पोषण करती हैं, जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करती हैं और कृषि के सतत विकास को प्रेरित करते हुए जैव विविधता में सुधार करती हैं। इसके विपरीत, प्राकृतिक संसाधनों के स्वास्थ्य में गिरावट कृषि विकास को अस्थिर करती है, भोजन और पर्यावरण सुरक्षा से समझौता करती है। चाहे वह मिट्टी की उर्वरता में अधः पतन, जैव विविधता की कमी या जलवायु परिवर्तन हो, उपरिकेंद्र मिट्टी के स्वास्थ्य और भूमि की गुणवत्ता का नुकसान है। वर्तमान में, दुनिया भर में एक अरब हेक्टेयर भूमि क्षेत्र मृदा क्षरण (भारत का हिस्सा-10%) से प्रभावित है। भारत में, हरित क्रांति आधारित कृषि पद्धतियों ने कम समय में अच्छे लाभांश का प्राप्त किया है और इसके परिणामस्वरूप देश न केवल खाद्य उत्पादन में आत्मनिर्भर हो गया बल्कि शुद्ध खाद्य निर्यातक राष्ट्र भी बन गया। हालांकि, जैसे-जैसे समय बीतता गया, संकीर्ण आनुवंशिक आधार, मोनोकल्चर, अनाज-अनाज चक्रण, बार-बार जुताई, कृषि-रसायनों का अनन्य उपयोग, अत्यधिक सिंचाई, आदि वाली इन प्रथाओं ने आंशिक कारक उत्पादकता में गिरावट और उत्पादन वृद्धि दर को स्थिर करने के साथ कृषि स्थिरता को कमजोर करना शुरू कर दिया। इस तरह की निष्क्रियता को जारी रखने से अधिक खनन और कम पोषक तत्वों की भरपाई के कारण मृदा के स्वास्थ्य में गिरावट आई है। मृदा के स्वास्थ्य में गिरावट बदले में जैव विविधता के नुकसान, दूषित पदार्थों और प्रदूषकों के निर्माण और जलवायु परिवर्तन के बढ़ते खतरे का स्रोत बन गई, जिसके परिणाम अनिश्चित और अप्रत्याशित बने हुए हैं। भारत या उस मामले में कोई भी अन्य देश शायद ही इस तरह के प्रतिकूल विकास के साथ रह सकता है जो कृषि के सतत विकास के विपरीत है। इसलिए, समय-समय पर मृदा स्वास्थ्य को पुनर्जीवित करने के लिए खेती की कई वैकल्पिक प्रणालियां प्रस्तावित की गई हैं। कम विनिमय, टिकाऊ कृषि, संरक्षित कृषि, जैविक खेती, प्राकृतिक खेती और शून्य लागत प्राकृतिक खेती, कुछ प्रमुख खेती की वैकल्पिक प्रणालियाँ हैं जोकि आधुनिक कृषि को बदलने या मजबूत करने उपयोगी सिद्ध हुई हैं। हालाँकि, प्रस्तावित खेती की वैकल्पिक प्रणाली के बीच, संरक्षित कृषि पर सबसे अधिक ध्यान दिया गया है, जिसका प्रयोग 102 देशों में लगभग 205 मिलियन हेक्ट क्षेत्र में किया जा रहा है, जो वैश्विक स्तर पर वार्षिक फसल भूमि के 15% से अधिक क्षेत्रफल को निहित करता है और वार्षिक 10.5% की दर से विस्तार कर रहा है।

हाल ही में, पुनर्जीवी कृषि को मिट्टी और पर्यावरणीय स्वास्थ्य में सुधार और उत्पादन, कृषक समुदाय की बेहतर अर्थव्यवस्था के लिए जैव विविधता में वृद्धि एक समग्र दृष्टिकोण के रूप में पेश किया जा रहा है। यह देश में अधिकाधिक पुनर्जीवी कृषि के महत्व को बढ़ावा देने में अग्रणी भूमिका निभाएगा। मुझे उम्मीद है कि ''कृषि-जीवन पत्रिका'' का यह अंक जिसका विषय **''टिकाऊ विकास के लिए पुनर्जीवित कृषि''** जिसमें विभिन्न पहलुओं को शामिल करने वाले 12 लेख होंगे, सभी हित धारकों के लिए उपयोगी होंगे और पूरे देश भर में व्यापक रूप से उपयोग किए जाएंगे।

(अनिल कुमार)

विषय सूची

क्र.स.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
1.	बुन्देली मिट्टी के प्रकार एवं अनुकूल फसलें	1
2.	बुंदेलखण्ड में जैविक और प्राकृतिक खेती की प्रचुर संभावनाएं	4
3.	उद्यानिकी में निवेश से होगा बुंदेली धरा का परिवर्तन	8
4.	पुनर्योजी कृषि का भविष्य एवं संभावनाएँ	11
5.	जीरो बजट खेती एवं अन्य पुनर्योजी खेती की विधियां	15
6.	जैविक एवं प्राकृतिक खेतीः एक आदर्श कृषि तकनीक	19
7.	एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधनः मृदा पोषण में प्राकृतिक एवं नवीन विधियां	22
8.	एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन में जीवाणु खाद की भूमिका	25
9.	जल संरक्षित खेती वर्तमान कृषि की आवश्यकता	29
10.	सतत मृदा स्वास्थ्य में मृदा संशोधन की महत्वपूर्ण भूमिका	33
11.	जहरीले रसायनों के बढ़ते प्रचलन में नियंत्रण आवश्यक	36
12.	जलवायु अनुकूल कृषि के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी का दोहन	39
13.	सूक्ष्म जीवों की प्रचुरता से ही मृदा जीवाश्म में बढोत्तरी	43
14	कृषि नवाचार	

बुन्देली मिट्टी के प्रकार एवं अनुकूल फसलें

अमित कुमार सिंह, सुशील कुमार सिंह, अनिल कुमार राय एवं शिव वेन्द्र सिंह
रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झांसी (उ.प्र.)-284 003
ई-मेल: singh.amit27@gmail.com

परिचयः

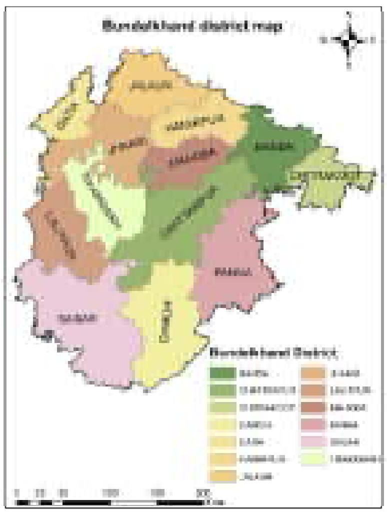

बुन्देलखण्ड भारत के मध्य भाग में फैला हुआ क्षेत्र है जिसका अनुमानित क्षेत्रफल 72,000 वर्ग किलोमीटर है। इस क्षेत्र का निर्माण मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश राज्यों के चौदह जिले से मिलकर होता है जिनका विवरण मानचित्र में प्रदर्शित है। भौगोलिक दृष्टि से यह क्षेत्र प्रायद्वीप के स्थिर पुंजक की प्राचीन चट्टानों के साथ-साथ इंडो गंगा के मैदान के जलोढ़ जमाव से निर्मित है। सामान्य तौर बुंदेलखंड क्षेत्र को उष्णकटिबंधीय मानसूनी जलवायु (शुष्क से अर्ध-शुष्क) परिस्थितियों के अंतर्गत वर्गीकृत किया गया है जो उत्तर-पूर्व और दक्षिण-पश्चिम मानसून की दो वायु धाराओं से प्रभावित होता है। बुन्देलखण्ड में औसत वार्षिक वर्षा 850-900 मिमी रिकार्ड की गई है। बुन्देलखण्ड की वार्षिक वर्षा में वर्ष-दर-वर्ष और स्थान-दर-स्थान काफी भिन्नता पाई जाती है। बार-बार मानसून की विफलता इस क्षेत्र को सूखाग्रस्त क्षेत्र बनाती है। बुन्देलखण्ड क्षेत्र मुख्य रूप से दलहन और अनाज उगाने वाला है। लेकिन 2006 के बाद से पूरे बुन्देलखण्ड में मोटे अनाज (मक्का, ज्वार, बाजरा और जौ) की खेती में भारी गिरावट आई है। हालाँकि खेती के वर्तमान परिदृश्य में इस क्षेत्र में, चने का क्षेत्रफल सबसे अधिक (32%) है, इसके बाद गेहूँ (28%), धान (16%), अरहर (12%), मूँगफली (11%), मूँग (9%), सोयाबीन (8%) उर्द (6%), तिल (5%) और सरसों और राई (4%) का स्थान आता है।

भारतीय भूमि एवं मृदा सर्वेक्षण विभाग के अनुसार बुन्देलखण्ड के मिट्टी को प्रमुख रूप से दो प्रकारों में बांटा गया है, लाल मिट्टी और काली मिट्टी। जिन्हें राकर (विघटित बलुआ पत्थर), परवा (मिश्रित लाल मिट्टी), काबर (काली एवं जलोढ़ मिश्रित मिट्टी), और मार (काली मिट्टी) के स्थानीय नाम से जाना जाता है। बुन्देलखण्ड क्षेत्र का 56% क्षेत्र लाल मिट्टी (अल्फिसोल्स और एंटिसोल्स) और 44% क्षेत्र काली मिट्टी (वर्टिसोल्स और इन्सेप्टिसोल्स) के अंतर्गत आता है। इन मिट्टी के प्रकारों में परिवर्तनशीलता मुख्य रूप से स्थलाकृति के साथ मृदा निर्माण की प्रक्रिया जैसे अपक्षय और निक्षालन के कारण थी। जिनका वर्णन भौतिक और रासायनिक गुणों के साथ नीचे किया गया है।

1. लाल मिट्टी

लाल मिट्टी की विशेषता मोटे बजरी वाली और हल्की मृदा संरचना वाली होती है, जिसमें जल धारण क्षमता कम होती है लाल मिट्टी में लोहा, एल्युमिनियम और चूने की प्रचुरता होती है। लाल मिट्टी का लाल रंग आयरन ऑक्साइड की उपस्थिति के कारण होता है, इसमें ह्यूमस, नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की कमी होती है। मिट्टी का पीएच 5.5-8.5 के बीच होता है। प्रकृति में बुनियादी है और फॉस्फोरस, नाइट्रोजन, ह्यूमस और कार्बनिक पदार्थों की कमी से ग्रस्त है। इस मिट्टी की जल धारण क्षमता कम होती है।

1(अ): राकर मिट्टी (विघटित बलुआ पत्थर मिट्टी)

विशेषताएं:

- राकर मिट्टी मिट्टी ऊँचे और पठारी इलाकों में पाई जाती हैं और इसकी गहराई ऊपरी सतह से मुश्किल से 50 सेमी होती है।
- राकर मिट्टी बनावट में हल्की, मोटे दाने वाली (बड़ी मात्रा में रेत और पत्थर), लाल भूरे रंग की और कम गहराई वाली होती है।
- इस मिट्टी में कम घुलनशील लवणों के साथ पीएच 6.5 से 7.5 के होती है।
- इस मिट्टी में नाइट्रोजन फॉस्फोरस, सल्फर और जिंक की

उपलब्धता बहुत कम और पोटाश की मात्रा कम से मध्यम पाई जाती है।

- कथित तौर पर अत्यधिक जल निकासी, ह्यूमस (कार्बनिक पदार्थ) और जल धारण क्षमता की कमी के कारण इस मिट्टी की उत्पादकता कम होती है।
- इस मिट्टी में बुआई के तुरंत बाद बारिश होने पर सतह पर पपड़ी बनना एक बहुत ही गंभीर समस्या है जो बीज के अंकुरण को खराब कर देती है।
- मिट्टी में आयरन ऑक्साइड और एल्युमिनियम होता है।

अनुकूल फसलें:

- राकर मृदाओं में प्रमुख उत्पादक मोटे अनाज, ज्वार, बाजरा, मक्का, लोबिया, उर्द, मूँग, जौ, तिल, और अलसी आदि फसलें उगाने के लिए उपयुक्त होती है।

1(ब): परवा मिट्टी (मिश्रित लाल मिट्टी)

विशेषताएं:

- परवा मिट्टी की उत्पत्ति कम वर्षा वाले क्षेत्रों में क्रिस्टलीय आग्नेय चट्टानों से होती है। इस मिट्टी की गहराई मध्यम (50-100 सेमी.) होती है और इसकी महत्वपूर्ण विशेषता यह है निचली परतों पर कैल्शियम कार्बोनेट की उपस्थिति के कारण कंकर परत के रूप में होता है।
- इस मिट्टी में पीएच मान 7.5 से अधिक होती है। जल धारण क्षमता कम होती है।
- इस मृदा का रंग भूरा लाल होता है, जिसका रंग लोहे के अधिक ऑक्सीकरण और फेरिक ऑक्साइड के हाइड्रोलिसिस के कारण होता है। लेकिन जलयोजित रूप में यह पीली दिखाई देती है।

- यह मिट्टी कुछ रेतीली होती है और इसमें अम्ल और पोटाश की मात्रा अधिक होती है जबकि इसमें नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, मैग्नीशियम और ह्यूमस की कमी होती है।

अनुकूल फसलें:

प्रमुख उत्पादक फसलें गेहूँ, मोटे अनाज, बाजरा आदि हैं। गन्ना, मक्का, मूँगफली, रागी, आलू, तिलहनी व दलहनी फसलें, आम, संतरा जैसे खट्टे फल व कुछ सब्जियों की खेती अच्छी सिंचाई व्यवस्था करके उगाई जा सकती हैं

2. काली मिट्टी

काली मिट्टी का निर्माण दक्कन ट्रैप की आग्नेय बेसाल्ट चट्टानों की अपक्षय प्रक्रिया के कारण हुआ है। यह चिकनी, गहरी और अभेद्य होती है। गीली होने पर ये बहुत फूल कर चिपचिपा हो जाती हैं और शुष्क मौसम में नमी वाष्पित होने से सिकुड़ जाती है और चौड़ी दरारें पड़ जाती हैं। इसे रेगुर मिट्टी भी कहते हैं।

2(अ): काबर मिट्टी (काली एवं जलोढ़ मिश्रित मिट्टी)

विशेषताएं:

- काबर मिट्टी चिकनी मिट्टी, चूने और मोटे कणों से बनी होती है और इसमें शुष्क परिस्थितियों में दरारें पड़ जाती हैं। इस मिट्टी का गठन निक्षेपण और जलोढ़ के जमाव के कारण होता है।
- इस मिट्टी की गहराई इसकी ऊपरी सतह से 100-120 सेमी. है और उसके नीचे मूल चट्टान स्थित है। काबर मिट्टी पीएच 7.0-8.0 के साथ प्रकृति में बुनियादी है। मिट्टी की नमी और पारगम्यता खराब होती है।

- काबर मिट्टी में नाइट्रोजन और सल्फर कम से मध्यम, फॉस्फोरस कम, पोटाश मध्यम से उच्च होती है।

अनुकूल फसलें:

इस मिट्टी में होने वाली मुख्य फसल कपास, गेहूँ, सोयाबीन और सरसों है लेकिन इसके अलावा गन्ना, चावल, ज्वार, बाजरा, सूरजमुखी, मूँगफली, अलसी, खट्टे फल, सब्जियां, तम्बाखू, व अनाज की फसलें, तिलहनी फसलें भी उगाई जाती हैं।

2(ब): मार मिट्टी

विशेषताएं:

- आमतौर पर मार मिट्टी निचले इलाकों में पाई जाती है। मिट्टी का रंग काला और बनावट भारी होती है, यह काला रंग लोहा तथा चूने की अधिकता के कारण होता है। यह बहुत महीन बनावट वाली मिट्टी होती है, विशेष रूप से निचले क्षितिज में

कैल्शियम कार्बोनेट की उपस्थिति है, जिसमें सूखने पर बड़ी और कभी-कभी गहरी दरारें होती हैं।

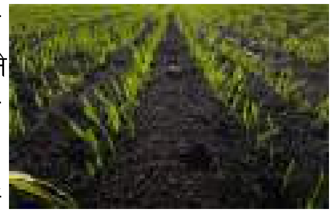

- इस मिट्टी की गहराई इसकी ऊपरी सतह से 120-180 सेमी है और उसके नीचे मूल चट्टान स्थित है। मार मिट्टी पीएच 7.5-8.5 के साथ प्रकृति में बुनियादी है।
- मार मिट्टी में कैल्शियम, मैग्नीशियम, एल्यूमीनियम, लोहा और पोटेशियम भरपूर होती है। हालांकि काली मिट्टी में नाइट्रोजन, ह्यूमस और फॉस्फोरस की उपस्थिति कम होती है। मार मिट्टी में जल धारण करने की उत्कृष्ट क्षमता होती है।

अनुकूल फसलेंः

- इस मिट्टी में होने वाली मुख्य फसल कपास, गेहूँ और सोयाबीन है लेकिन इसके अलावा गन्ना, चावल, ज्वार, बाजरा, सूरजमुखी, मूँगफली, अलसी, खट्टे फल, सब्जियां, तम्बाखू, व अनाज की फसलें, तिलहनी फसलें भी उगाई जाती हैं।

बुन्देलखण्ड में जैविक और प्राकृतिक खेती की प्रचुर संभावनाएं

नीतू सरोज[1], संदीप कुमार[2], अमन कुमार मौर्य[1], लक्ष्मण[3]

[1]रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी, (उ. प्र.) 284003

[2]आनुवंशिकी और पादप प्रजनन विभाग, सरदार कृषि अगर दांतीवाड़ा कृषि विश्वविद्यालय, (गुजरात) 385506

[3]कृषि विज्ञान विभाग, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ. प्र.) 208002

ई-मेलः neetusaroj177@gmail.com

सारांश

जैविक खेती कृषि का एक आधुनिक और टिकाऊ रूप है जो उपभोक्ताओं को ताजा प्राकृतिक कृषि उत्पाद प्रदान करती है। जैविक खेती विश्व कृषि के सबसे तेजी से बढ़ते क्षेत्रों में से एक है। जैविक खेती प्रकृति के विरूद्ध नहीं बल्कि प्रकृति के साथ तालमेल बिठाकर काम करती है। प्राकृतिक पर्यावरण के साथ-साथ इसमें रहने और काम करने वाले लोगों को नुकसान पहुँचाए बिना फसल की पैदावार में सुधार करने के लिए तकनीकों का उपयोग करके इस उद्देश्य को प्राप्त किया जाता है। जैविक खेती का विशेष रूप से पक्षियों, कीड़ों, खरपतवारों, वन्य जीवन और मिट्टी के वनस्पतियों और जीवों पर बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। जैविक कृषि पर्यावरण-अनुकूल प्रथाओं का एक विशेष समामेलन प्रदान करती है, जिसके लिए कम बाहरी इनपुट की आवश्यकता होती है, जिससे भोजन की उपलब्धता में वृद्धि होती है। जैविक खेती सिंथेटिक उर्वरकों और कीटनाशकों से मुक्त, लागत प्रभावी खाद्य उत्पाद पैदा करती है। जैविक खेती में उपयोग की जाने वाली विधियाँ अधिक महंगी और श्रम गहन हैं, लेकिन लंबे समय में अधिक लागत प्रभावी साबित होती हैं। बुन्देलखण्ड में मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए जैविक खेती सबसे अच्छा विकल्प है क्योंकि यह अपने पारंपरिक रूपों की तुलना में पोषक तत्वों का बेहतर स्रोत प्रदान करती है। उत्तर प्रदेश सरकार ने बुन्देलखण्ड के सात जिलों में प्राकृतिक खेती के क्लस्टर बनाने की पहल की है। इस अभियान की वित्तीय जरूरतों की पूर्ति के लिए सरकार ने तय राशि के आवंटन को मंजूरी देना भी शुरू कर दिया है। बुन्देलखण्ड इलाके में प्राकृतिक खेती की संभावनाओं को देखते हुए सरकार ने इस क्षेत्र के सभी सात जिलों के प्रत्येक विकासखंड में कम से कम 50 हेक्ट का एक क्लस्टर बनाने का लक्ष्य तय किया है जिससे प्राकृतिक खेती की ओर किसानों का रुझान बढ़ाया जा सके।

प्रस्तावना

जैविक खेती एक प्रकार की कृषि है जो शुरुआती किसानों द्वारा हजारों वर्षों से की जाती रही है। प्राचीन काल में मानव स्वास्थ्य के अनुकुल तथा प्राकृतिक वातावरण के अनुरूप खेती की जाती थी, जिससे जैविक और अजैविक पदार्थों के बीच आदान-प्रदान का चक्र निरन्तर चलता रहा था, जिसके फलस्वरूप जल, भूमि, वायु तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होता था। कृषि उत्पादन को बनाए रखने के लिए जैविक खेती ने वर्तमान दशकों में बहुत अधिक ध्यान आकर्षित किया है जैविक खेती से न केवल बढ़िया और स्वस्थ खाद्य उत्पाद पैदा होते हैं बल्कि मिट्टी की उर्वरता और गुणवत्ता में भी सुधार होता है। यह खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने, गरीबी उन्मूलन और महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, जिन पर दुनिया की वर्तमान और भावी पीढ़ियाँ अपने अस्तित्व और कल्याण के लिए पूरी तरह से निर्भर होंगी। प्राकृतिक स्रोतों से उत्पादित जैविक कीटनाशकों का उपयोग जैविक भोजन के उत्पादन में किया जा सकता है जैविक खेती पारिस्थितिक चक्रों पर आधारित है, और इसलिए प्रक्रियाएं बाहरी योगदान के उपयोग को कम करती हैं। यह खेतों के संसाधन उपयोग को कम करता है और सिस्टम में पोषक तत्वों के ढेर को सीमित करता है। यह फॉस्फोरस और नाइट्रोजन यूट्रोफिकेशन के खतरे को कम करता है और अतिनिषेचन से बचाता है। जैविक पशुधन खेती पर्यावरण के अनुकूल उत्पादन, पशुओं को अच्छे स्वास्थ्य में बनाए रखने, पशु लाभ मूल्यों को साकार करने पर आधारित है जिससे उच्च श्रेणी की पैदावार होती है। जैविक पशुधन खेती उपभोक्ताओं की बढ़ती संख्या की माँगों को पूरा करती है। जैविक कृषि के लिए कम बाहरी इनपुट की आवश्यकता होती है, जिससे खाद्य उपलब्धता में वृद्धि होती है। यह पारिस्थितिक तंत्र, मनुष्यों या जानवरों के लिए नगण्य विनाश के साथ भोजन उत्पन्न करने पर आधारित प्रणाली है। ''जैविक खेती पर्यावरण को वह वापस दे रही है जो उससे लिया गया था''।

बार-बार पड़ने वाले सूखे और प्राकृतिक आपदाओं के कारण बुन्देलखण्ड की कृषि योग्य भूमि लगभग पूरी तरह नष्ट हो रही है। बढ़ता पर्यावरण असंतुलन और पानी की कमी इसका मुख्य कारण है जिसके कारण आवश्यक पोषक तत्वों की कमी हो रही है और उत्पादन भी बुरी तरह प्रभावित हो रहा है। जमीन की उर्वरा शक्ति जैविक कार्बन पर निर्भर करती है और यही बुन्देलखण्ड में लगातार कम हो रहा है। मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए जैविक खेती सबसे

अच्छा विकल्प है क्योंकि यह अपने पारंपरिक रूपों की तुलना में पोषक तत्वों का बेहतर स्रोत प्रदान करती है। भारत सरकार भी इस खेती को अपनाने के लिए प्रचार-प्रसार कर रही है।

जैविक खेती के सिद्धांत

- मिट्टी की दीर्घकालिक उर्वरता को बनाए रखने का प्रयास करना।
- पर्याप्त मात्रा में और उच्च पोषण गुणवत्ता वाले खाद्य उत्पादों का उत्पादन करना।
- स्थानीय संसाधनों का उपयोग करना और एक बंद प्रणाली के भीतर जितना संभव हो सके काम करना।
- कृषि अभ्यास में जीवाश्म ऊर्जा के उपयोग में कटौती करना।
- कृषि श्रमिकों को मनुष्य के रूप में अपनी क्षमताएं विकसित करने और अपने काम के माध्यम से जीविकोपार्जन करने की अनुमति देना।
- पशुधन को जीवन की ऐसी स्थितियाँ प्रदान करना जो उनकी शारीरिक आवश्यकताओं को पूरा करें।

जैविक खेती से लाभ

पर्यावरणीय लाभ

जैविक खेती पर्यावरण को सिंथेटिक आदानों, विशेष रूप से कीटनाशकों, उर्वरकों और हार्मोनों के उपयोग से उत्पन्न होने वाले हानिकारक प्रभावों से बचाती है। जैविक कृषि कमोबेश लगातार अधिक जैव विविधता का समर्थन करती है और आमतौर पर प्रति इकाई भूमि पर सकारात्मक पर्यावरणीय प्रभाव डालती है। भूमि के जल स्तर में वृध्दि होती हैं। मिट्टी खाद पदार्थ और जमीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण मे कमी आती है। कचरे का उपयोग, खाद बनाने में, होने से बीमारियों में कमी आती है। फसल उत्पादन की लागत में कमी एवं आय में वृध्दि अंतरर्राष्ट्रीय बाजार की स्पर्धा में जैविक उत्पाद की गुणवत्ता का खरा उतरना। जैविक खेती का विशेष रूप से पक्षियों, कीड़ों, खरपतवारों, वन्यजीवों और मिट्टी के वनस्पतियों पर सकारात्मक और अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

मिट्टी के लाभ

मिट्टी की उर्वरता और गुणवत्ता में भी सुधार होता है। भूमि की जल धारण क्षमता बढ़ती हैं। भूमि से पानी का वाष्पीकरण कम होता है। पशुधन अपशिष्ट और फसल अवशेषों सहित कार्बनिक पदार्थों का सफल पुनर्चक्रण, और कीट नियंत्रण मुख्य रूप से फसल रोटेशन, विविधता, प्राकृतिक शिकारियों, प्रतिरोधी किस्मों और जैविक खाद आदि जैविक खेती की मुख्य विशेषताएं हैं।

कृषकों की दृष्टि से लाभ

जैविक कृषि में शून्य कीटनाशकों और कम ऊर्जा की खपत होती हैं। कीटनाशक इनपुट और सिंथेटिक उर्वरकों की कम लागत के साथ-साथ जैविक उत्पादों के लिए उपभोक्ताओं द्वारा वितरित की जाने वाली उच्च कीमतें मुनाफे में वृद्धि करती हैं। पारंपरिक खेतों की तुलना में जैविक खेतों को हमेशा किसानों के लिए अधिक लाभदायक पाया गया है। अधिकांश मामलों में, पारंपरिक खेती की तुलना में जैविक खेती द्वारा 30 से 50% कम ऊर्जा की खपत होती है।

जैविक खेती हेतु प्रमुख जैविक खाद एवं दवाईयाँ

जैविक खाद

- बायोगैस स्लरी
- वर्मी कम्पोस्ट
- नाडेप
- हरी खाद
- जैव उर्वरक (कल्चर)
- मुर्गी का खाद
- गोबर की खाद
- नाडेप फास्फो कम्पोस्ट
- पिट कम्पोस्ट

जैविक खाद तैयार करने की विधियाँ

बायोगैस स्लरी

बायोगैस संयंत्र में गोबर गैस की पाचन क्रिया के बाद 25% ठोस पदार्थ रूपान्तरण गैस के रूप में होता है और 75 प्रतिशत ठोस पदार्थ का रूपान्तरण खाद के रूप में होता हैं। जिसे बायोगैस स्लरी कहा जाता हैं दो घनमीटर के बायोगैस संयंत्र में 50 किलोग्राम प्रतिदिन या 18.25 टन गोबर एक वर्ष में डाला जाता है। उस गोबर में 80 प्रतिशत नमी युक्त करीब 10 टन बायोगैस स्लेरी का खाद प्राप्त होता हैं। ये खेती के लिये अति उत्तम खाद होता है। इसमें 1.5 से 2% नाइट्रोजन, 1% फॉस्फोरस एवं 1% पोटाश होता हैं।

बायोगैस संयंत्र में गोबर गैस की पाचन क्रिया के बाद 20 प्रतिशत नाइट्रोजन अमोनियम नाइट्रेट के रूप में होता है। अतः यदि इसका तुरंत उपयोग खेत में सिंचाई नाली के माध्यम से किया जाये तो इसका लाभ रासायनिक खाद की तरह फसल पर तुरंत होता है और उत्पादन में 10-20 प्रतिशत बढ़त हो जाती है। स्लरी के खाद में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश के अतिरिक्त सूक्ष्म पोषण तत्व एवं ह्यूमस भी होता हैं जिससे मिट्टी की संरचना में सुधार होता है

तथा जल धारण क्षमता बढ़ती है। सूखी खाद असिंचित खेती में 5 टन एवं सिंचित खेती में 10 टन प्रति हैक्टर की आवश्यकता होगी। ताजी गोबर गैस स्लरी सिंचित खेती में 3-4 टन प्रति हैक्टर में लगेगी। सूखी खाद का उपयोग अन्तिम बखरनी के समय एवं ताजी स्लरी का उपयोग सिंचाई के दौरान करें। स्लरी के उपयोग से फसलों को तीन वर्ष तक पोषक तत्व धीरे-धीरे उपलब्ध होते रहते हैं।

वर्मी कम्पोस्ट

केंचुआ कृषकों का मित्र एवं भूमि की आंत कहा जाता हैं। सेन्द्रिय पदार्थ ह्यूमस व मिट्टी को एकसार करके जमीन के अंदर अन्य परतों में फैलाता हैं। इससे जमीन पोली होती है व हवा का आवागमन बढ़ जाता है तथा जलधारण क्षमता में बढ़ोतरी होती है। केंचुओं के पेट में जो रसायनिक क्रिया व सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रिया होती है, जिससे भूमि में पाये जाने वाले नत्रजन, स्फुर एवं पोटाश एवं अन्य सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता बढ़ती हैं। वर्मी कम्पोस्ट में बदबू नहीं होती है और मक्खी एवं मच्छर नहीं बढ़ते है तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होता है। तापमान नियंत्रित रहने से जीवाणु क्रियाशील तथा सक्रिय रहते हैं। वर्मी कम्पोस्ट डेढ़ से दो माह के अंदर तैयार हो जाता है। इसमें 2.5 से 3% नाइट्रोजन, 1.5 से 2% फॉस्फोरस तथा 1.5 से 2% पोटाश पाया जाता है।

वर्मीकम्पोस्ट उत्पादन के लिए आवश्यक अवयव

1. केंचुओं का चुनाव एपीजीक या सतह पर निर्वाह करने वाले केंचुए जो प्रायः भूरे लाल रंग के एवं छोटे आकार के होते है, जो कि अधिक मात्रा में कार्बनिक पदार्थों को विघटित करते है।
2. नमी की मात्रा केंचुओं की अधिक बढ़वार एवं त्वरित प्रजनन के लिए 30 से 35 प्रतिशत नमी होना अति आवश्यक है।
3. वायु केंचुओं की अच्छी बढ़वार के लिए उचित वातायन तथा गड्ढे की गहराई ज्यादा नहीं होनी चाहिए।
4. अंधेरा केंचुए सामान्यतः अंधेरे में रहना पसंद करते हैं अतः केचुओं के गड्ढों के ऊपर बोरी अथवा छप्पर युक्त छाया या मचान की व्यवस्था होनी चाहिए।
5. पोषक पदार्थ इसके लिए ऊपर बताये गये अपघटित कूड़े-कचरे एवं गोबर की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

केंचुओं में प्रजनन

उपयुक्त तापमान, नमी खाद्य पदार्थ होने पर केंचुए प्रायः 4 सप्ताह में वयस्क होकर प्रजनन करने लायक बन जाते है। व्यस्क केंचुआ एक सप्ताह में 2-3 कोकून देने लगता है एवं एक कोकून में 3-4 अण्डे होते हैं। इस प्रकार एक प्रजनक केंचुए से प्रथम 6 माह में ही लगभग 250 केंचुए पैदा होते है।

वर्मी कम्पोस्ट बनाने की विधि

(40' x 3' x 1') 120 घन फिट आकार के गड्ढे से एक वर्ष में लगभग चार टन वर्मीकम्पोस्ट प्राप्त होती है। उपरोक्त आकार के गड्ढों को ढंकने के लिए 4-5 फिट ऊँचाई वाले छप्पर की व्यवस्था करें, (जिसके ढंकने के लिए पूआल/टाट बोरा आदि का प्रयोग किया जाता है) ताकि तेज धूप, वर्षा व लू आदि से बचाव हो सके। गड्ढे में सबसे नीचे ईटो के टुकडो छोटे पत्थरों व मिट्टी 1-3 इंच मोटी तह बिछाएं।

सबसे पहले दो-तीन इंच मोटी मक्का, ज्वार या गन्ना इत्यादि के अवशेषों की परत बिछाएं। इसके ऊपर दो-ढाई इंच मोटी आंशिक रूप के पके गोबर की परत बिछाएं एवं इसके ऊपर दो इंच मोटी वर्मी कम्पोस्ट जिसमें उचित मात्रा कोकुन (केंचुए के अण्डे) एवं वयस्क केंचुए हो, इसके बाद 4-6 इंच मोटी घास की पत्तियां, फसलों के अवशेष एवं गोबर का मिश्रण बिछाएं और सबसे ऊपर गड्ढे को बोरी या टाट आदि से ढक कर रखें। मौसम के अनुसार गड्ढों पर पानी का छिड़काव करते रहें। इस दौरान गड्ढे में उपस्थित केंचुए इन कार्बनिक पदार्थों को खाकर कास्टिंग के रूप में निकालते हुए केंचुए गड्ढे के ऊपरी सतह पर आने लगते है। इस प्रक्रिया में 3-4 माह का समय लगता है। गड्ढे की ऊपरी सतह का काला होना वर्मीकम्पोस्ट के तैयार होने का संकेत देता है। इसी प्रकार दूसरी बार गड्ढा भरने पर कम्पोस्ट 2-3 महीनों में तैयार होने लगती है।

वर्मीकम्पोस्ट तैयार होने के बाद इसे खुली जगह पर ढेर बनाकर छाया में सूखने देना चाहिए परन्तु इस बात का ध्यान रहे कि उसमें नमी बने। इसमें उपस्थित केंचुए नीचे की सतह पर एकत्रित हो जाते हैं। जिसका प्रयोग मदर कल्चर के रूप में दूसरे गड्ढे में डालने के लिए किया जा सकता है। सूखने के पश्चात वर्मीकम्पोस्ट का उपयोग अन्य खादों की तरह बुवाई के पहले खेत/वृक्ष के थालों में किया जाना चाहिए। फलदार वृक्ष बड़े फलदार वृक्षों के लिए पेड़ के थालों में 3-5 किलो वर्मीकम्पोस्ट मिलाएं एवं गोबर तथा फसल अवशेष इत्यादि डालकर उचित नमी की व्यवस्था करें।

वर्मी कम्पोस्ट के लाभ

- वर्मीकम्पोस्ट के प्रयोग से मृदा में जीवांश पदार्थ (हयूमस) की वृद्धि होती है, जिससे मृदा संरचना, वायु संचार तथा की जल धारण क्षमता बढ़ने के साथ-साथ भूमि उर्वरा शक्ति में वृद्धि होती है।
- वर्मीकम्पोस्ट के माध्यम से अपशिष्ट पदार्थों या जैव अपघटित कूड़े-कचरे का पुनर्चक्रण (रिसैकिलिंग) आसानी से हो जाता है।
- वर्मीकम्पोस्ट जैविक खाद होने के कारण इससे उत्पादित

गुणात्मक कृषि उत्पादों का मूल्य अधिक मिलता है।

- जैविक खाद होने के कारण वर्मीकम्पोस्ट में लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रियाशीलता अधिक होती है जो भूमि में रहने वाले सूक्ष्म जीवों के लिये लाभदायक एवं उत्प्रेरक का कार्य करते हैं।
- वर्मीकम्पोस्ट में उपस्थित पौध पोषक तत्व पौधों को आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं।
- वर्मीकम्पोस्ट के प्रयोग से मृदा की जैविक क्रियाओं में बढ़ोतरी होती है।

नाडेप विधि

नाडेप का आकारः- लम्बाई 12 फीट चौड़ाई 5 फीट ऊँचाई 3 फीट आकार का गड्ढा कर लें।

भरने हेतु सामग्रीः- 75 प्रतिशत वनस्पति के सूखे अवशेष, 20 प्रतिशत हरी घास, गाजर घास, पुवाल, 5 प्रतिशत गोबर, 2000 लिटर पानी। सभी प्रकार का कचरा छोटे-छोटे टुकड़ों में हो। गोबर को पानी से घोलकर कचरे को खूब भिगो दें। फावडे से मिलाकर गड्ड-मड्ड कर दें।

1. नाडेप में कचरा 4 अंगुल भरें। इस पर मिट्टी 2 अंगुल डालें। मिट्टी को भी पानी से भिगो दें। जब पुरा नाडेप भर जाये तो उसे ढ़ालू बनाकर इस पर 4 अंगुल मोटी मिट्टी से ढ़ांप दें।
2. कचरे के ऊपर 12 से 15 किलो रॉक फॉस्फेट की परत बिछाकर पानी से भिंगो दें। इसके ऊपर 1 अंगुल मोटी मिट्टी बिछाकर पानी डालें। गड्ढा पूरा भर जाने पर 4 अंगुल मोटी मिट्टी से ढांप दें।
3. कचरे की परत के ऊपर 2 अंगुल मोटी नीम की पत्ती हर परत पर बिछायें। इस खाद नाडेप कम्पोस्ट में 60 दिन बाद सब्बल से डेढ़-डेढ़ फुट पर छेद कर 15 टीन पानी में 5 पैकेट पी.एस.बी एवं 5 पैकेट एजेक्टोबेक्टर कल्चर को घोलकर छेदों में भर दें। इन छेदों को मिट्टी से बंद कर दें।

हरी खाद

बढ़ती फसलों के लिए, कई हरी खाद फसलें पर्याप्त नाइट्रोजन और कार्बनिक पदार्थ देती हैं। 45 से 60 दिनों के बीच की समय सीमा में, ये 60-90 किलोग्राम नाइट्रोजन की आपूर्ति कर सकते हैं। मिट्टी की उर्वरा शक्ति जीवाणुओं की मात्रा एवं क्रियाशीलता पर निर्भर रहती है क्योंकि बहुत सी रासायनिक क्रियाओं के लिए सूक्ष्म जीवाणुओं की आवश्यकता रहती है। जीवित व सक्रिय मिट्टी वही कहलाती है जिसमें अधिक से अधिक जीवांश हो। जीवाणुओं का भोजन प्रायः कार्बनिक पदार्थ ही होते है और इनकी अधिकता से मिट्टी की उर्वरा शक्ति पर प्रभाव पड़ता है। अर्थात् केवल जीवाणुओं से मिट्टी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाया जा सकता है। मिट्ट की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने की क्रियाओं में हरी खाद प्रमुख है। इस क्रिया में वानस्पतिक सामग्री को अधिकांशतः हरे दलहनी पौधों को उसी खेत में उगाकर जुताई कर मिट्टी में मिला देते है। हरी खाद हेतु मुख्य रूप से सन, ढेंचा, लाबिया, उड़द, मूँग इत्यादि फसलों का उपयोग किया जाता है।

आर्गेनिक जैविक खाद बनाने का घरेलु तरीका

एक एकड़ भूमि के लिए कीट नियंत्रक बनाने के लिए हमें चाहिए 20 लीटर देसी गाय का गौ मूत्र 3 से 5 किलोग्राम ताजा हरा नीम कि पत्ती या निमोली, 2.500 किलो ग्राम ताजा हरा आंकड़ा के पत्ते, 2500 किलोग्राम भेल के पत्ते ताजा हरा, 2.500 ताजा हरा आडू के पत्ते इन सब पत्तों को कूट कर बारीक किलोग्राम पीसकर चटनी बनाकर उबाले और उसमे 20 गुना पानी मिलाकर किट नाशक या नियंत्रक तैयार करे इसको खड़ी फसल पर पम्प द्वारा तर बतर कर छिड़काव करे इससे जो भी कीड़े फसल को हानी पहुँचाते है वह तो खत्म हो जायेंगे परन्तु फसल को किसी भी तरह का हानी नहीं होगा।

कीट नियंत्रण

- देशी गाय का मट्ठा 5 लीटर लें। इसमें 3 किलो नीम की पत्ती या 2 किलो नीम खली डालकर 40 दिन तक सड़ायें फिर 5 लीटर मात्रा को 150 से 200 लिटर पानी में मिलाकर छिड़कने से एक एकड़ फसल पर इल्ली/रस चूसने वाले कीड़े नियंत्रित होंगे।
- लहसुन 500 ग्राम, हरी मिर्च तीखी चिटपिटी 500 ग्राम लेकर बारीक पीसकर 150 लीटर पानी में घोलकर कीट नियंत्रण हेतु छिड़कें।
- 10 लीटर गौ मूत्र में 2 किलो अकौआ के पत्ते डालकर 10 से 15 दिन सड़ाकर, इस मूत्र को आधा शेष बचने तक उबालें फिर इसके 1 लीटर मिश्रण को 150 लीटर पानी में मिलाकर रसचूसक कीट/इल्ली नियंत्रण हेतु छिड़कें।
- इन दवाओं का असर केवल 5 से 7 दिन तक रहता है। अतः एक बार और छिड़कें जिससे कीटों की दूसरी पीढ़ी भी नष्ट हो सके।
- बेशरम के पत्ते 3 किलो एवं धतूरे के तीन फल फोड़कर 3 लिटर पानी में उबालें। आधा पानी शेष बचने पर इसे छान लें। इस छने काढ़े में 500 ग्राम चने डालकर उबालें। ये चने चूहों के बिलों के पास शाम के समय डाल दें। इससे चूहों से निजात मिल सकेगी।

उद्यानिकी में निवेश से होगा बुंदेली धरा का परिवर्तन

गौरव शर्मा

उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी-284003 (उ.प्र.)

ई-मेलः gauravhort@gmail.com

सारांशः

बागवानी बुंदेलखण्ड क्षेत्र के आर्थिक और पर्यावरणीय परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो भारत में उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के कुछ हिस्सों में फैली हुई है। यह शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्र, इसकी चुनौतीपूर्ण जलवायु परिस्थितियों और लगातार पानी की कमी की विशेषता है, महत्वपूर्ण कृषि बाधाओं का सामना करता है। हालांकि, बागवानी बुंदेलखण्ड में सतत विकास और आर्थिक वृद्धि के लिए एक आशाजनक अवसर के रूप में उभरा है। बुंदेलखण्ड में विविध बागवानी गतिविधियों में फलों, सब्जियों, मसालों और फूलों की खेती शामिल है। इस क्षेत्र की अनूठी कृषि-जलवायु परिस्थितियाँ अनार, अमरूद और लीची जैसी कुछ उच्च मूल्य वाली फसलों के लिए अनुकूल हैं, जो तेजी से महत्वपूर्ण नकदी फसलें बन रही हैं। ये बागवानी प्रथाएं न केवल पारंपरिक अनाज की तुलना में उच्च आर्थिक लाभ प्रदान करती हैं, बल्कि विधि के माध्यम से मिट्टी संरक्षण और जल प्रबंधन में भी योगदान करती हैं।

परिचयः

कृषि अर्थव्यवस्था में उद्यानिकी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है क्योंकि उद्यानिकी फसलें विविध हैं और इसमें सभी प्रकार के फल, सब्जियां, फूल, मसाले के अतिरिक्त प्रसंस्करण एवं अन्य शामिल हैं। मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश का बुन्देलखण्ड क्षेत्र अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थिति के कारण कई उद्यानिकी फसलों के लिये उपयुक्त है एवं उद्यानिकी व्यवसाय को यहाँ बढ़ावा देने की पर्याप्त गुंजाइश है। बुन्देलखण्ड में उत्तर प्रदेश (चित्रकूट, बांदा, झाँसी, जालौन, हमीरपुर, महोबा और ललितपुर) और मध्य प्रदेश (छतरपुर, टीकमगढ़, दमोह, सागर, दतिया, पन्ना और निवाड़ी) के सात-सात जिले शामिल हैं। इन क्षेत्र मे अनियमित वर्षा, कठोर जलवायु, सूखा और चट्टानी इलाके हैं। बुन्देलखण्ड के प्रमुख कृषि उपज अनाज (54.6%), दालें (32.4%), तिलहन (8.0%), गन्ना (0.2%), और उद्यानिकी (4.8%) सहित अन्य फसलें हैं। उद्यानिकी उत्पादों के उच्च मूल्य के कारण उद्यानिकी आधारित व्यवसाय लोकप्रियता प्राप्त कर रही है। इस क्षेत्र में विभिन्न उद्यानिकी फसलें व्यावसायिक रूप से सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं। उद्यानिकी गरीब किसानों की आजीविका सुरक्षा में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। फलों का उत्पादन नर्सरी तैयार करने से लेकर रोपण, कटाई, पैकिंग, खुदरा बिक्री तक सभी चरणों में रोजगार पैदा कर सकता है। बुन्देलखण्ड की सिंचित और कृषि योग्य भूमि अनार, मौसम्बी, नींबू, संत्रा, अमरूद, कस्टर्ड एप्पल, पपीता और अंजीर जैसी फलों की खेती के लिए उपयुक्त है जब कि खराब भूमि मे करौंदा, आंवला, बेल, बेर, फालसा और महुआ को उगाया जा सकता है। अन्य फल जैसे ड्रैगन फ्रूट, स्ट्र बेरी आदि का फल उत्पादन भी उपयुक्त हो सकता है। उन्नत किस्में और रूट स्टॉक भी आय बढ़ाने में मदद कर सकते हैं। जैव विविधता की उपलब्धता और पारंपरिक रूप से बुन्देलखण्ड क्षेत्र में विभिन्न फलों की खेती इसकी विशाल क्षमता दर्शाति है।

बुन्देलखण्ड में सब्जियों की खेती की भी अपार सम्भावनाएँ हैं। यूपी के बुन्देलखण्ड में कुल 4.67% क्षेत्र में उद्यानिकी की खेती की जाती है जिसमें अकेले सब्जी का योगदान 3.24% है। इसी तरह, एमपी के बुन्देलखण्ड क्षेत्र में सब्जी की खेती लगभग 1.35% में होती है। इस क्षेत्र में स्थानीय सब्जिया (बैंगन, कद्दू) और मसाले (अदरक, हल्दी, मिर्च) का जर्मप्लास्म अच्छी मात्रा में उपलब्ध है। व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण सब्जियाँ, विशेषकर मटर, टमाटर, प्याज, बैंगन, आलू, पत्तागोभी, फूलगोभी, खीरा, मिर्च आदि उगाई जा सकती हैं। इस क्षेत्र में वर्षा आधारित प्याज, सहजन और धनिया की खेती एवं संरक्षित खेती के तहत कुछ उच्च मूल्य वाली सब्जियां जैसे खीरा, शिमला मिर्च, चेरी टमाटर के उतपादन की भी संभावना है। हरी मटर पहले से ही यहाँ सफलता पूर्वक उगाई जा रही है। फूलों की खेती भी बुन्देलखण्ड के चुनिंदा इलाकों में की जाती है। मध्य भारत के इस क्षेत्र में फूलों के व्यवसाय की असीम संभावना है। गेंदा, गुलदाउदी, ग्लेडियोलस, गेलार्डिया, रजनीगंधा, गुलाब, चमेली और मौसमी फूलो जिन का बाजार काफी अच्छा है, व्यावसायिक रूप से यहाँ उगाये जा सकते है। बुन्देलखण्ड में पर्यटन और धार्मिक महत्व के कई शहर हैं जहाँ फूलों की साल भर मांग रहती है। इसके अलावा, हाल ही में उच्च मूल्य वाले फूल जैसे जरबेरा, हाइब्रिड गुलाब आदि भी लोकप्रियता हासिल कर रहे हैं और माँग में हैं। फलों, फूलों और सब्जियों के व्यावसायिक उत्पादन और उनकी बिक्री के अलावा, उद्यानिकी आधारित फसल प्रणाली एवं बागवानी उत्पाद और विपणन में भी निवेश की बहुत बड़ी संभावनाएं हैं जिनमें से कुछ महत्वपूर्ण घट्क निम्न हैः

हाइब्रिड बीज उत्पादन एवम गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री

सब्जीयों, फूलों एवं फलों में हाइब्रिड बीज उत्पादन एवं बिक्री की बुन्देलखण्ड में असीम सम्भावनाये हैं। हाइब्रिड बीज गुणवत्तापूर्ण होने के काराण काफी मेहंगे बिकते हैं। बुन्देलखण्ड क्षेत्र के लिए उपयुक्त फलों, सब्जियों और फूलों की फसलों की उन्नत किस्मों के हाइब्रिड बीज से न केवल उपज में वृद्धि होगी, बल्कि फसल विविधीकरण के परिणामस्वरूप आजीविका सुरक्षा भी होगी। इसी प्रकार उद्यानिकी रोपण सामग्री की भी बहुत माँग है। पारंपरिक पौधशाला पुरानी प्रवर्धन तकनीकों का उपयोग करती हैं जिसके परिणाम स्वरूप उपज की समग्र गुणवत्ता कम हो जाती है। गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री के प्रचार-प्रसार से फसल उत्पादकता बढ़ाने की गुंजाइश है। गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री टिशू कल्चर (अनार, स्ट्र बेरी, साइट्रस, जरबेरा), उच्च बीज एवम सूक्ष्म-प्रवर्धन तकनीकों से ही प्राप्त होगी। हाई-टेक नर्सरी में उगाई गई स्वस्थ रोपण सामग्री कीट-रोग मुक्त होती है जिसके परिणामस्वरूप पौध खेत में जीवित रेहते है एवम शीघ्र स्थापित हो जाते है।

संरक्षित खेती

कठोर जलवायु में फसलें उगाने एवं अधिक मुनाफे हेतु बे-मौसम (ऑफ-सीजन) खेती के लिए संरक्षित खेती उपयोगी है। अच्छी गुणवत्ता और अधिक उपज वाली उद्यानिकी फसलों की व्यावसायिक खेती के लिए उन्हें संरक्षित परिस्थितियों (नियंत्रित या प्राकृतिक रूप से हवादार) खास तौर पर शेड नेट, फैन पैड पॉलीहाउस, प्राकृतिक रूप से हवादार पॉलीहाउस में उत्पादित करने की आवश्यकता है। इससे बेमौसमी फसलों के उत्पादन में भी मदद मिलेगी और बाजार में उपज उपलब्ध होने की अवधि भी बढ़ेगी जिससे किसानों को अधिक कीमत मिलेगी। उच्च मूल्य वाली उद्यानिकी फसलें जैसे सब्जियां (खीरा, शिमला मिर्च, टमाटर, चेरी टमाटर, तरबूज, खरबूज), फूल (जरबेरा, गुलाब, सेवंति), फल (स्ट्र बेरी) आदि उगाई जा सकती हैं और उचित प्रबंधन के साथ आय को कई गुना बढ़ाया जा सकता है। हाइड्रोपोनिक्स/एरोपोनिक्स से भी कम जगह में अधिक उत्पादन लेकर लाभ कमाया जा सकता है।

प्रसंस्करण एवम मूल्य संवर्धन

उद्यानिकी उत्पाद पोषक तत्वों (विटामिन, खनिज), फाइटोकेमिकल्स (फिनोल, फ्लेवोनोइड) और आहार फाइबर जैसे अन्य स्वास्थ्य-प्रचारक गैर-पौष्टिक कारकों से समृद्ध है जो इन फसलों के प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन के लिए एक शानदार अवसर प्रदान करते है। प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन के लिए लघु फल (अंजीर, बेर, बेल, आंवला, कैथा), सब्जियाँ (मटर, टमाटर), फूल (गेंदा, गुलाब, पलाश) और मसाले (हल्दी, अदरक, धनिया, मिर्च) के प्रसंस्कृत उत्पादों का उपयोग तथा बायो-फोर्टिफिकेशन के माध्यम से मूल्यवर्धन की काफी सम्भावनाये हैं। इसके अलावा रंगद्रव्य-(कैरोटेन यड्स) न्यूट्रास्युटिकल और फार्मास्युटिकल उद्योग, खाद्य योजकों के रूप में, पोल्ट्री उद्योगों में चारे के रूप में, सूखे फूल, प्रोंतिक रंग, गुलकंद, तेल, इत्र, में निवेश से काफी बद्लाव लाया जा सकता है।

भंडारण और कोल्ड चेन में निवेश

खेत से उपभोक्ता तक कटाई उपारांत खराब होने वाली बागवानी उपज की गुणवत्ता बनाए रखने हेतु इष्टतम निम्न तापमान बनाए रखना (कोल्ड चेन प्रबंधन) महत्वपूर्ण है। कोल्ड चेन इंफ्रास्ट्रक्चर उद्यानिकी और संबद्ध क्षेत्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, विशेष रूप से फलों, सब्जियों और फूल जैसे जल्दी खराब होने वाले उत्पादों के भंडारण और परिवहन में। कटाई के बाद की हैंडलिंग और पैकेजिंग सहित भंडारण और कोल्ड चेन साथ ही ल जिस्टिक्स सेवाएं यानी आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन (गोदाम, ग्रेडिंग और पैकेजिंग) की आवश्यक्ता है जो कि अपने आप में उद्यानिकी का एक बहुत बडा मार्केट है। साथ ही कृषि बाजार का निर्माण, फसल बीमा योजना में भी सम्भावनायें है।

फूल एवम लैंडस्केप बागवानी

साल भर फूलों की माँग बढ़ती जा रही है। फूलों का उपयोग गुलदस्ता तैयार करने, फूलों के बूके में, मालाएँ, वेणी, कंगन, उद्यान प्रदर्शन, धार्मिक भेंट, विभिन्न सामाजिक कार्यो में और सजावटी उद्देश्य के लिए किया जाता है। लैंडस्केप गार्डनिंग को अब कई स्थानों जैसे क पोरेट कार्यालयों, संस्थानों, हवाई अड्डों, होटलों, मॉल आदि में अपनाया जाता है। बगीचे की साज-सज्जा, इनडोर बागवानी, टर्फ, पॉट उद्योग, फव्वारे, पौधों के रख-रखाव, नर्सरीमैन, लैंडस्केप आर्किटेक्ट, उद्यमिता और परामर्श के माध्यम से इसमें रोजगार के कई अवसर है। इसमे निवेश से शहर और उसके आस-पास की कई सारी नर्सरिया से लोगों को रोजगार प्राप्त हो रहा है।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियाँ

बुन्देलखण्ड क्षेत्र कम और अनियमित वर्षा, तीव्र धूप, कम सापेक्ष आर्द्रता और उच्च वाष्पीकरण-उत्सर्जन से बाधित हैं। सूक्ष्म सिंचाई विधि से 70 प्रतिशत तक पानी की बचत होती है और बचाए गए पानी से अधिक भूमि की सिंचाई की जा सकती है। प्रति बूंद-अधिक फसल के साथ सूक्ष्म सिंचाई तकनीकों विशेष रूप से टपक एवं स्प्रिंकलर सिंचाई के साथ-साथ मल्च के कुशल उपयोग से उद्यानिकी फसलो में अधिक उत्पादन एवं लाभ कमाया जा सकता

है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियों को अपनाने से बेहतर रोजगार और आय सृजन होगा एवं ग्रामीण युवाओं को बागवानी की ओर आकर्षित करने का अवसर प्रदान करेगा।

मशीनीकरण एवं स्वचालित उपकरणों का उपयोग

इस युग में मशीनीकरण/उच्च तकनीक उपकरण, सेंसर और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस द्वारा सटीक बागवानी पर जोर दिया जा रहा है। ऐसे में बागवानी में मशीनीकरण एवं स्वचालित उपकरणों का उपयोग बढ़ेगा जिससे की कम समय में आधिक उत्पादन लिया जा सके साथ ही मैनप वर की समस्या कुछ हद तक दूर हो सके। बागवानी में मशीनीकरण ग्रामीण युवाओं को आकर्षित कर स्मार्ट-होर्टि-उद्यमी बनने का अवसर प्रदान करेगा।

बागवानी परामर्श एवं पर्यटन

बागवानी परामर्श या सलाहकार विशेषज्ञ होते हैं जो बागवानी से जुडी समस्याओं का मूल्यांकन कर के ग्राहकों को उचित तकनीकी या व्यावसायिक सलाह प्रदान करते हैं। बागवानी पर्यटन एक व्यावसायिक उद्यम है जो बागवानी और पर्यटन को जोड़ता है। बागवानी-पर्यटन बागवानी फार्म (फलों के बगीचे या सब्जी उद्यान या सजावटी उद्यान) का दौरा करने वाले आगंतुकों को आकर्षित करता है साथ ही यह माना जाता है कि इस से स्वास्थ लाभ भी मिलता है जो अब व्यवसाय के रूप में आकार ले रहा है।

पुनर्योजी कृषि का भविष्य एवं सम्भावनाएं

शिखर कुमार

रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी, (उ. प्र.) 284003

E-mail: shikharbahai59@gmail.com

सारांश

एक अनुमान के अनुसार, 2050 तक दुनिया की आबादी लगभग 10 बिलियन के आसपास होने वाली है, जिसका अर्थ है कि 3.4 बिलियन नए मुँहों को भोजन कराना होगा। किन्तु वैज्ञानिकों का मानना है कि जलवायु परिवर्तन कृषि को प्रतिकूल तरीके से प्रभावित कर रहा है और भविष्य में भी करता रहेगा। उदाहरण के लिए, यदि हम देखते हैं, तो हाल ही में सब्जियों और लेग्यूम्स पर एक शोध में पता चला कि जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के कारण साल 2100 तक इनके उत्पादन में 35% की गिरावट आएगी। दिन-प्रतिदिन जैसे-जैसे तकनीकी का विकास हो रहा है, सोशल मीडिया और इंटरनेट का दौर जोर पकड़ रहा है, लोग ऐसे शोध पढ़ रहे हैं और जागरूक हो रहे हैं। वे जान चुके हैं कि जलवायु परिवर्तन एक सच्चाई है और यदि समय रहते हमने उचित कदम नहीं उठाए तो बचना मुश्किल हो जाएगा। जो अभी तक नहीं जान पाए हैं, ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन की मार उन्हें भी जानने पर मजबूर कर देगी।

परिचय

ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों से निपटने के लिए मानव तरीकों की खोज कर रहा है और उसका एक तरीका है पुनर्योजी कृषि। पुनर्योजी कृषि एक ऐसी कृषि प्रणाली है जो न केवल खाद्य उत्पादन में सुधार करती है, बल्कि मिट्टी की उर्वरता, जैव विविधता और पारिस्थितिक तंत्र को भी बनाए रखती है। यह प्रणाली पर्यावरण के अनुकूल होने के साथ-साथ किसानों के लिए आर्थिक रूप से भी लाभकारी है। इसमें अनुसंधान और तकनीकी नवाचार के असीमित अवसर हैं जो मृदा स्वास्थ्य, जल संरक्षण और फसल उत्पादन में सुधार ला सकते हैं।

पुनर्योजी कृषि का परिचय और परिभाषाः

आज के समय में हमारी कृषि पूर्णतया रसायनों पर आश्रित हो गई है, ऐसा प्रतीत होता है कि यदि कोई शक्ति आए और इन कृषि रसायनों को हमारे धरातल से गायब कर दे तो हमारी कृषि संकट में आ जाएगी। इसी कसमकस से उबरने के लिए पुनर्योजी कृषि की अवधारणा 80 के दशक में सामने आई। पुनर्योजी कृषि की अवधारणा को प्रतिपादित करने का श्रेय संभवतः रोडेल को जाता है, जिन्होंने 1980 में इस पद का नाकी इस्तेमाल किया अपितु अनेकों सिद्धांत दिए जो आज भी प्रासंगिक एवं उपयोगी हैं। रॉबर्ट रोडेल (1983) ने पुनर्योजी कृषि को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया। पुनर्योजी कृषि एक ऐसी प्रणाली है जो उच्च उत्पादन क्षमता के साथ हमारी भूमि और मिट्टी की जैविक उत्पादन आधार को बढ़ाती है। इसमें आर्थिक और जैविक स्थिरता का उच्च स्तर शामिल होता है। इसका पर्यावरण पर खेत या क्षेत्र की सीमाओं से परे न्यूनतम प्रभाव पड़ता है। यह स्वास्थ्यवर्धक और रसायनमुक्त भोजन का उत्पादन करती है। यह गैर-नवीकरणीय संसाधनों पर न्यूनतम निर्भरता की ओर संक्रमण के दौरान बढ़ती संख्या में लोगों के उत्पादक योगदान को सुनिश्चित करती है। अतः पुनर्योजी कृषि, कृषि प्रणाली का एक समग्र दृष्टिकोण है, जिसमे रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के न्यूनतम प्रयोग, कवर फसल, पशुधन का एकीकरण और कम से कम जुताई जैसे सिद्धांतों का अभ्यास करके मृदा सुधार एवं पुनर्निर्माण, जैव विविधता में संवृद्धि, पारिस्थितिक तंत्र का पुनरोद्धार, जल-चक्र में सुधार, भोजन की गुणवत्ता में वृद्धि और जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीलापन बढ़ाने जैसे मुख्य उद्देश्य शामिल हैं।

पारंपरिक एवं जैविक कृषि से पुनर्योजी कृषि का अंतरः

समकालीन कृषि प्रेमियों के बीच आज परंपरागत कृषि, जैविक कृषि, जीरो बजट प्राकृतिक कृषि, सतत कृषि, पर्माकल्चर और पुनर्योजी कृषि जैसी कृषि प्रणालियों का पालन किया जा रहा है। ये सभी खाद्य उत्पादन के विभिन्न तरीके हैं। जब भी हमारे वातावरण में कोई बदलाव आता दिखता है या कोई आवश्यकता उत्पन्न होती है, तब वैज्ञानिक और विचारक नए तरीकों की खोज में जुट जाते हैं। अनेक वर्षों के अवलोकन और अनुसंधान के पश्चात, अपने वातावरण को बचाने और उसमें सुधार करने के साथ-साथ खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के लिए इन नई पद्धतियों को इजाद किया गया है। इनमें कई विभिन्नताएं तो हैं ही, बल्कि कई समानताएं भी हैं। यहाँ हम मुख्यतः परंपरागत कृषि, जैविक कृषि, पुनर्योजी कृषि एवं प्राकृतिक खेती की विभिन्नताओं एवं समानताओं पर चर्चा करेंगे।

1. **परंपरागत कृषिः** परंपरागत कृषि का मुख्य उद्देश्य रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग एवं हाइब्रिड बीजों के प्रयोग द्वारा उच्च उत्पादन और अधिकतम लाभ प्राप्त करना है।

2. **जैविक कृषिः** जैविक कृषि रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग एवं हाइब्रिड बीजों के प्रयोग को नकारते हुए प्रकृति के साथ सामंजस्य और लोगों के स्वास्थ्य पर प्रमुखता से केंद्रित है।

3. **पुनर्योजी कृषिः** पुनर्योजी कृषि इनसे कहीं बढ़कर है क्योंकि इसका उद्देश्य उत्पादन के साथ-साथ मिट्टी सुधार एवं पुनर्निर्माण, जैव विविधता में संवृद्धि, पारिस्थितिक तंत्र का पुनरोद्धार, जल-चक्र में सुधार, भोजन की गुणवत्ता में वृद्धि और जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीलापन बढ़ाने पर केंद्रित है। पुनर्योजी कृषि जैविक से परे है, क्योंकि इसमें 'मैक्रो संरचना' और 'सामाजिक प्रासंगिकता' में बदलाव शामिल हैं, और उत्पादक संसाधनों को घटाने के बजाय बढ़ाने का प्रयास किया गया है।

4. **प्राकृतिक कृषिः** प्राकृतिक खेती का उद्देश्य बिना किसी रासायनिक उर्वरक या कीटनाशक के प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करते हुए खेती करना है। यह विधि कम लागत में अधिक उत्पादन, मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने, और पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने पर बल देती है। इसमें जीवामृत, घनजीवामृत, और बीजामृत जैसे घरेलू जैविक उपचारों का उपयोग किया जाता है।

पुनर्योजी कृषि का दर्शन - हारवुड (1983) द्वारा प्रस्तुत बिंदु

1. **उच्च पोषणयुक्त खाद्य उत्पादनः** कृषि को उच्च उपज के साथ रसायनों (बायोसाइड्स) से मुक्त अत्यधिक पोषणयुक्त खाद्य पदार्थों का उत्पादन करना चाहिए।

2. **मिट्टी की उत्पादकता बढ़ानाः** मिट्टी की ऊपरी परतों की गहराई, उर्वरता और भौतिक विशेषताओं को बढ़ाकर कृषि को मृदा की उत्पादकता को कम करने के बजाय वृद्धि करना चाहिए।

3. **पोषक तत्व प्रवाह प्रणालीः** पोषक तत्व प्रवाह प्रणाली जो पूरी तरह से मिट्टी के जीव - जंतुओं को, अधिक कुशल और पर्यावरण के लिए कम हानिकारक ढाँचे में शामिल करती है, और बेहतर फसल पोषण सुनिश्चित करती है। ऐसी प्रणालियाँ, प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभाव को कम या समाप्त करते हुए मृदा परिच्छेदिका (प्रोफाइल) में पोषक तत्वों की नई ऊर्ध्व प्रवाह प्रक्रिया को प्राप्त करती है। परिभाषा के अनुसार, यह प्रक्रिया, एक मृदा निर्माण प्रक्रिया है।

4. **जैविक स्थिरता पर आधारित फसल उत्पादनः** सिंथेटिक बायोसाइड्स की आवश्यकता समाप्त करते हुए, स्थिरता के लिए फसल उत्पादन जैविक अंतः क्रियाओं पर आधारित होना चाहिए।

5. **रासायनिक पदार्थों से बचनाः** वे पदार्थ जो कृषि प्रणाली की जैविक संरचना को बाधित करते हैं (जैसे आज के सिंथेटिक उर्वरक), उनका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।

6. **मानव और प्रणाली के बीच घनिष्ठ संबंधः** पुनर्योजी कृषि की जैविक संरचना में प्रणाली के प्रबंधक/प्रतिभागियों और प्रणाली के बीच घनिष्ठ संबंध की आवश्यकता होती है।

7. **जैविक नाइट्रोजन स्थाईकरण (नाइट्रोजन फिक्सैशन):** एकीकृत प्रणालियां जो काफी हद तक जैविक नाइट्रोजन स्थाईकरण पर आत्मनिर्भर हैं उनका उपयोग किया जाना चाहिए।

8. **पशुओं का सही पोषण और आवासः** कृषि में पशुओं को इस तरह से खिलाया और रखा जाना चाहिए कि हार्मोनों और रोगनिरोधी एंटीबायोटिक्स के उपयोग को रोका जा सके, जो अंततः मानव भोजन में मौजूद होते हैं।

9. **रोजगार के स्तर को बढ़ानाः** कृषि उत्पादन को रोजगार के अवसरों को बढ़ावा देना चाहिए।

10. **राष्ट्रीय स्तर की योजना और स्थानीय आत्मनिर्भरताः** पुनर्योजी कृषि को राष्ट्रीय स्तर की योजना की आवश्यकता होती है, लेकिन पोषक तत्व प्रवाह छिद्रों (Loops) को बंद करने के लिए स्थानीय और क्षेत्रीय स्तर पर उच्च आत्मनिर्भरता भी होनी चाहिए।

पुनर्योजी कृषि के प्रमुख सिद्धांतः

सिद्धांत	सस्य क्रियाएं
कम से कम जुताई	जीरो-टिलेज, कम जुताई, संरक्षण कृषि, नियंत्रित यातायात
मिट्टी को ढँक कर रखना	आच्छादन (मल्च), आवरण फसलें (कवर क्रॉप्स), केचुंआ खाद
मिट्टी में कार्बन का निर्माण	बायोचार, कम्पोस्ट, हरी खाद, पशु खाद
कार्बन को संचित करना	कृषि वानिकी, सिलवी-पैस्चर, वृक्ष फसलें

जैविक पोषक चक्रों पर अधिक निर्भरता	पशु खाद, कम्पोस्ट, कम्पोस्ट चाय, हरी खाद और आवरण फसलें, मिट्टी में जीवित जड़ों को बनाए रखना, मिट्टी और कम्पोस्ट का टीकाकरण, खनिज उर्वरकों पर निर्भरता कम करना, जैविक कृषि, केचुआ खाद
पौध विविधता को बढ़ावा देना	विविध फसल चक्र, बहु-प्रजाति आवरण फसलें, कृषि वानिकी
पशुधन का एकीकरण	चक्रीय चराई, समग्र/नैतिक दृष्टि से उचित, चराई, चरागाह की फसल, सिलवी-पैस्चर
कीटनाशकों से बचाव	विविध फसल चक्र, बहु-प्रजाति आवरण फसलें, कृषि वानिकी
जल के अंतः स्त्रवण को बढ़ावा देना	बायोचार, कम्पोस्ट, हरी खाद, पशु खाद, समग्र/नैतिक दृष्टि से उचित, चराई

पुनर्योजी कृषि का भविष्य

यूं तो वैज्ञानिकों एवं कृषि प्रेमियों के बीच पिछले 3-4 दशकों में जैविक कृषि की तुलना में पुनर्योजी कृषि चर्चा में कम रही है, किंतु समकालीन समय में इस सिद्धांत पर अग्रणी किसान, निजी संस्थान, NGOs एवं सरकारी संस्थानों ने अधिक जोर देना शुरू किया है। उदाहरण के लिए, ''जलवायु परिवर्तन और भूमि'' पर IPCC द्वारा 2019 में जारी रिपोर्ट में पुनर्योजी कृषि के महत्व पर काफी जोर दिया गया है। आज लोग अपने स्वास्थ्य के प्रति सजग एवं सतर्क हो रहे हैं। बाजार में रसायन मुक्त अनाज, फल और सब्जियों की माँग बढ़ रही है। ऐसे उत्पादों के लिए लोग दोगुना-तीन गुना या उससे भी अधिक मूल्य देने के लिए तैयार हैं। पुनर्योजी कृषि करने के लिए निवेश कम करना पड़ता है और लाभ ज्यादा मिलता है, अतः यह गरीब किसानों की आय बढ़ाने के लिए अच्छा अवसर साबित हो सकता है। इसका समाज एवं लोगों के आपसी संबंधों पर भी अनुकूल प्रभाव दिखाई देगा, क्योंकि यह छोटे किसानों की आय बढ़ाकर लोगों के बीच समानता लाने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है।

पुनर्योजी कृषि में उगाई गई फसलों में पोषण तत्वों की मात्रा अधिक पाई जाती है साथ ही ये रसायन मुक्त भी होते हैं। ऐसा भोजन हमें चुस्त एवं तंदुरुस्त तो बनाता ही है, रोग प्रतिरोधक क्षमता को भी बढ़ाता है। ऐसा देखा गया है कि ऐसे उत्पादों का स्वाद एवं फ्लेवर भी खास होता है, जिसकी लोगों के बीच एक खास ब्रांड वैल्यू और साख हो सकती है। पुनर्योजी कृषि जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने और मृदा के स्वास्थ्य को सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। यह मृदा की संरचना को बेहतर बनाने, जैविक पदार्थों की मात्रा बढ़ाने, मृदा में सूक्ष्म जीव-जंतुओं की विविधता और क्रियाओं को बढ़ाने में योगदान देती है। पुनर्योजी कृषि जैव विविधता के ह्रास को रोकने में सहायक है। यह कृषि प्रणालियों में विविध फसलों और वनस्पतियों की उपस्थिति को बढ़ावा देती है, जिससे पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता में वृद्धि होती है। NASA के अनुसार, पिछले 200 वर्षों में पर्यावरण में कार्बन की मात्रा 50% से अधिक बढ़ गई है, जो ग्लोबल वार्मिंग और जलवायु परिवर्तन का प्रमुख कारण है। पुनर्योजी कृषि मृदा, जल, और पेड़-पौधों में वातावरण में उपस्थित कार्बन को संचित और शोषित कर कार्बन संचारण में मदद कर सकती है। पुनर्योजी कृषि मृदा में जल अंतःस्त्रवण में वृद्धि, वर्षा जल बहाव में कमी, और जल संरक्षण में अभिन्न योगदान अदा कर सकती है। भूमि में जीवित जड़ों की उपस्थिति मृदा क्षरण से भी बचाव कर सकती है।

पुनर्योजी कृषि को बढ़ावा देने के प्रयास

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय और ICAR (भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद) द्वारा पुनर्योजी कृषि को बढ़ावा देने के लिए शिक्षा, प्रशिक्षण और अनुसंधान पर विशेष जोर दिया जा रहा है। इसके तहत विभिन्न योजनाएं और कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं:

1. **प्राकृतिक कृषि में स्नातक डिग्री कार्यक्रमः** ICAR ने प्राकृतिक कृषि में स्नातक डिग्री कार्यक्रम आरंभ किया है, ताकि कृषि छात्रों को पुनर्योजी कृषि के सिद्धांतों और तकनीकों का गहन ज्ञान प्राप्त हो सके।
2. **राष्ट्रीय जैविक कृषि परियोजना (NPOP):** यह परियोजना 2004 से ICAR & IIFSR, मेरठ द्वारा चलाई जा रही है और जैविक कृषि पर सबसे लंबा अनुसंधान है। इसका उद्देश्य जैविक खेती के क्षेत्र में अनुसंधान और विकास को बढ़ावा देना है।
3. **परंपरागत कृषि विकास योजना (PKVY):** यह योजना 2015 में शुरू की गई थी। इसके अंतर्गत बीज, कंपोस्ट, वर्मी-कंपोस्ट आदि खरीदने, किसानों का प्रशिक्षण और प्रमाणिकरण में आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है।
4. **उत्तर-पूर्वी क्षेत्र के लिए मिशन ऑर्गेनिक वैल्यू चेन डेवलपमेंट (MOVCDNER):** इस योजना का उद्देश्य उत्तर-पूर्वी भारत में जैविक कृषि को बढ़ावा देना और जैविक उत्पादों की मूल्य श्रृंखला का विकास करना है।
5. **राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (RKVY):** यह योजना समग्र कृषि और संबंधित क्षेत्रों के विकास को बढ़ावा देने के लिए चलाई जा रही है।

पुनर्योजी कृषि के क्षेत्र में सरकार और ICAR के प्रयासों के परिणामस्वरूप, किसानों को न केवल बेहतर कृषि तकनीकों का ज्ञान प्राप्त हो रहा है, बल्कि वे अधिक टिकाऊ और लाभकारी कृषि पद्धतियों को अपनाने के लिए प्रेरित हो रहे हैं। यह न केवल किसानों की आय में वृद्धि करेगा, बल्कि पर्यावरण की भी रक्षा करेगा और आने वाली पीढ़ियों के लिए एक स्थायी कृषि प्रणाली का निर्माण करेगा।

पुनर्योजी कृषि में अनुसंधान और तकनीकी नवाचार के अवसर

परंपरागत कृषि में रसायनों का इतना अधिक उपयोग किया गया है कि मृदा का शोषण अथवा दोहन हो गया है। इससे मृदा के स्वास्थ्य को जो क्षति पहुँची है, उसकी पूर्ति में कई वर्षों का समय लग सकता है। इसके लिए नई तकनीकों, शस्य क्रियाओं में सुधार और नवाचार, जैविक तरीके से कीट-व्याधियों के रोकथाम, जैविक खाद आदि पर शोध की आवश्यकता होगी। फसलों की ऐसी किस्मों की आवश्यकता होगी जिन्हें बिना रसायनों के उगाया जा सके। फसलों में कीट और रोग प्रतिरोधक क्षमता हो। यह फसलें कम पानी और लागत में अच्छा उत्पादन दें। नई तकनीकों और सशक्त क्रियाओं के द्वारा मृदा की उर्वरता को बहाल करने पर ध्यान देना होगा। जैविक खाद और कम्पोस्ट का प्रयोग मृदा को पुनर्जीवित करने के लिए किया जा सकता है। आज तकनीकी और AI का युग है, चाहे हम इनका भरपूर उपयोग करें या न करें, हमारे प्रतिद्वंदी जरूर करेंगे, और यदि वे सफल रहे तो हमसे आगे निकल जाएंगे। आज प्रिसीजन एग्रीकल्चर, IOT, AI और ML, डेटा एनालिटिक्स एवं रोबोटिक्स का उपयोग कृषि में बढ़ रहा है। पुनर्योजी कृषि को सतत और स्थिर बनाने में इन तकनीकों में अनुसंधान के कई अवसर हैं। हमें इनका उपयोग करना सीखने की आवश्यकता है, और इसमें शिक्षा एवं प्रशिक्षण की भी आवश्यकता है।

भविष्य की चुनौतियाँ

पुनर्योजी कृषि मुख्यतः निम्न चुनौतियों को हल करने की ओर ध्यान आकर्षित करती है:

1. जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करना और मृदा के स्वास्थ्य का जीर्णोद्धार
2. जैव विविधता के ह्रास में कमी

परंपरागत कृषि से पुनर्योजी कृषि में परिवर्तन के दौरान 3-5 वर्षों का समय किसानों के लिए चुनौतिओं भरा होता है, क्योंकि इसमें उत्पादन काफी कम होता है और लागत ज्यादा लगती है, हालाँकि कुछ समय में इसमें सुधार आता है और उत्पादन अच्छा हो जाता है, किन्तु हमारे अधिकतर किसान गरीब और छोटे किसान हैं और उनका जीवन-यापन उन्हीं छोटे खेतों पर निर्भर करता है, जिससे वे परिवर्तन काल में लगने वाला समय और खर्च उठाने में असमर्थ हैं। सरकार द्वारा चलाई जाने वाली योजनाएँ भी उन्हें कुछ खास लाभ नहीं पहुँचा पाती हैं, क्योंकि कागजी कार्यवाही की आवश्यकता होती है, जिसके लिए उन्हें दफ्तरों के चक्कर काटने पड़ते हैं और लाभ भी नाममात्र का होता है। इसके अलावा, किसान अनपढ़ होते हैं और उनके पास पुनर्योजी कृषि से संबंधित उचित और पर्याप्त जानकारी नहीं होती है। इसलिए उन्हें शिक्षित और प्रशिक्षित करने की जरूरत है। पुनर्योजी कृषि को अपनाने में मृदा स्वास्थ्य की बहाली, जल प्रबंधन, जलवायु परिवर्तन के प्रभाव, बाजार और उपभोक्ता जागरूकता, और अनुसंधान की कमी जैसी चुनौतियाँ शामिल हैं। मृदा को पुनर्जीवित करने, जल धारण क्षमता बढ़ाने, और जलवायु परिवर्तन के साथ अनुकूल खेती विधियाँ अपनाने में कठिनाई होती है। इसके अलावा, पुनर्योजी कृषि उत्पादों के लिए बाजार की सीमित उपलब्धता और उपभोक्ताओं की जागरूकता की कमी है। पर्याप्त वैज्ञानिक डेटा और अनुसंधान की कमी भी एक बड़ी चुनौती है, जिसके लिए निवेश की आवश्यकता है। इन सभी का समाधान ढूँढ़ना पुनर्योजी कृषि की सफलता के लिए महत्वपूर्ण है।

निष्कर्षः

जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग से निपटने के लिए मृदा, जल, और जैव विविधता संरक्षण को बढ़ावा देने में पुनर्योजी कृषि महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। यह रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के न्यूनतम उपयोग, कवर फसल, पशुधन का एकीकरण, और कम से कम जुताई जैसे सिद्धांतों का पालन करके मृदा स्वास्थ्य में सुधार करती है। पुनर्योजी कृषि उच्च पोषणयुक्त खाद्य उत्पादन, मिट्टी की उत्पादकता बढ़ाने, पोषक तत्व प्रवाह प्रणाली को मजबूत करने, रासायनिक पदार्थों से बचाव, मानव और कृषि प्रणाली के बीच घनिष्ठ संबंध स्थापित करने, जैविक नाइट्रोजन स्थाईकरण (नाइट्रोजन फिक्सेशन), पशुओं का सही पोषण और आवास, रोजगार के स्तर को बढ़ाने, राष्ट्रीय स्तर की योजना और स्थानीय आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने में सक्षम है। इसमें अनुसंधान और तकनीकी नवाचार के असीमित अवसर हैं जो मृदा स्वास्थ्य, जल संरक्षण और फसल उत्पादन में सुधार ला सकते हैं। इन तकनीकों के प्रभावी उपयोग के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण की आवश्यकता होगी। इस दिशा में प्रयास करके हम न केवल कृषि को अधिक टिकाऊ बना सकते हैं, बल्कि किसानों की आय और जीवन स्तर में भी सुधार कर सकते हैं।

पुनर्योजी कृषि को अपनाने से हम अपने पर्यावरण की रक्षा कर सकते हैं, स्वस्थ और पोषणयुक्त भोजन का उत्पादन कर सकते हैं और एक स्थायी भविष्य की ओर बढ़ सकते हैं।

जीरो बजट खेती एवं अन्य पुनर्योजी खेती की विधियां

अनिल कुमार राय, योगेश्वर सिंह एवं शिव वेन्द्र सिंह

सस्य विज्ञान विभाग, रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झांसी (उ. प्र.)- 284003

ई-मेलः anilrai.mscag@gmail.com

सारांश

प्राकृतिक खेती पारंपरिक भारतीय पद्धतियों से उद्धृत रसायन मुक्त कृषि की एक विधि है, हालांकि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्राकृतिक खेती को पुनर्योजी कृषि का एक रूप माना जाता है, प्राकृतिक खेती, कृषि पद्धति का एक अनूठा मॉडल है जो कृषि-पारिस्थितिकी पर निर्भर करता है, प्राकृतिक खेती का उद्देश्य उत्पादन की लागत को कम करना और एक स्थायी स्तर पर वापसी को बढ़ावा देना है, प्राकृतिक खेती में उर्वरक, कीटनाशक और गहन सिंचाई जैसे महँगे इनपुट की कोई आवश्यकता नहीं होती है, प्राकृतिक खेती मिट्टी की सतह पर सूक्ष्मजीवों और केंचुओं द्वारा कार्बनिक पदार्थों के अपघटन को प्रोत्साहित करती है, एवं धीरे-धीरे समय के साथ मिट्टी में पोषक तत्वों को जोड़ती है।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती

यह पद्धति पारंपरिक भारतीय प्रथाओं व देशी गाय के गोबर और मूत्र पर आधारित है। इस पद्धति में कृषि लागत जैसे उर्वरक, कीटनाशक, खरपतवारनाशक व फफूंदनाशक व सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। जिससे कृषि लागत में रूप से गिरावट आती है। इसलिये इसे जीरो बजट प्राकृतिक खेती का नाम दिया गया है।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती से लाभ-

- महंगे कृषि आदान की आवश्यकता नहीं।
- उत्पादन लागत में कमी।
- बहु फसल संभव।
- कम लागत में अधिक पैदावार।
- खेत की उर्वरता में वृद्धि।
- उपज की गुणवत्ता बेहतर।
- बाजार में उपज के अधिक दाम।
- मृदा की जलधारण क्षमता में वृद्धि।

प्राकृतिक कृषि के कुछ विशेष पहलू-

1. यह पद्धति प्रकृति, विज्ञान आधारित है
2. इस पद्धति में रसायनिक खाद, कीटनाशक, फफूंदनाशक, खरपतवारनाशक, गोबर खाद, जैविक खाद, केंचुआ खाद का उपयोग नहीं करना है। केवल एक देशी गाय की सहायता से इस खेती को कर सकते हैं।
3. फसल उत्पादन जहर मुक्त, उच्च्व गुणवत्तायुक्त, पौष्टिक व स्वादिष्ट होगा।

प्राकृतिक कृषि (खेती) के सिद्धान्त-

1. **देशी गाय-** यह कृषि मुख्य रूप से देशी गाय पर आधारित है। देशी गाय के गोवर एवं मूत्र की महक से देशी केंचुए भूमि की सतह पर आ जाते हैं और भूमि को उपजाऊ बनाते हैं। देशी गाय के गोबर में मुख्य पोषक तत्त्व होते हैं। ये 16 तत्त्व हो हमारे पौधों के विकास के लिए उपयोगी है। निर्माण करते है। इसलिए देशी गाय प्राकृतिक कृषि की मूलाधार है।
2. **जुताई-** प्राकृतिक कृषि में गहरी जुताई नहीं की जाती क्योंकि यह भूमि की उपजाऊ शक्ति को कम कर देती है। और ह्यूमस की निर्माण-क्रिया रुक जाती है जिसके कारण भूमि की उपजाऊ शक्ति कम हो जाती है।
3. **जल प्रबंधन-** प्राकृतिक कृषि में सिंचाई पौधों से कुछ दूरी पर की जाती है। इसमें मात्र 10 प्रतिशत जल का ही उपयोग होता है जिससे 90 प्रतिशत जल की बचत हो जाती है। पौधों को कुछ दूरी से जल देने पर पौधों की जड़ों की लम्बाई बढ़ जाती है। जड़ों की लम्बाई बढ़ जाने से पौधों के तनों की मोटाई बढ़ जाती है। इस क्रिया से पौधों की लम्बाई भी बढ़ जाती है। इसके परिणामस्वरूप उत्पादन बढ़ जाता है।
4. **सहयोगी फसलें-** प्राकृतिक कृषि में मुख्य फसल के साथ सहयोगी फसलों की खेती भी एक साथ की जाती है जिससे मुख्य फसल को नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश आदि मिलता रहे। सहयोगी फसलों की जड़ों के पास नाइट्रोजन स्थिरक जीवाणु जैसे राइजोबियम, अजोस्पीरीलम, अजोटोबैक्टर आदि की मदद से पौधों का विकास होता है। प्राकृतिक कृषि में मुख्य फसलों के साथ सहयोगी फसलें लगाने से मुख्य फसल पर कीट नियंत्रण भी साथ-साथ होता है।

जीरो बजट प्राकृतिक खेती के स्तंभ-

जीरो बजट प्राकृतिक खेती टिकाऊ कृषि-पारिस्थितिक प्रणाली के दृष्टिकोण पर आधारित है और यह पारिस्थितिक तंत्र को संतुलित करने में मदद करती है। इस पद्धति के मुख्य स्तंभ हैं।

1. जीवामृत, 2. घन जीवामृत, 3. व्हापसा, 4. जीवामृत, 5. बीजामृत 6. आच्छादन

भूसा-आच्छादन- स्ट्र मल्च सबसे अच्छी मल्च सामग्री में से एक है।

जीव मृत- यह देशी गाय के गोबर और मूत्र, गुड़, दाल, पानी एवं मृदा से तैयार सूक्ष्म जीवों का किण्वित मिश्रण होता है, यह मृदा में लाभकारी सूक्ष्म गतिविधियों को बढ़ाता है व पोषक तत्वों की मात्रा में वृद्धि करता है।

देशी गाय का गोबर- 10 किलोग्राम, देशी गाय का मूत्र- 8-10 लीटर, गुड़- 1-2 किलोग्राम, बेसन- 1-2 किलोग्राम, बरगद या पीपल के पेड़ के नीचे की मिट्टी-1 किलोग्राम, पानी-180 लीटर

उपयोग विधि- प्रति एकड़ 200 लीटर जीवामृत का खड़ी फसल पर या पानी की सिंचाई के साथ उपयोग करें।

घन जीव मृत- घन जीवामृत बनाने के लिए देशी गाय का गोबर, थोड़ा गोमूत्र, एक किग्रा गुड़, 2 किग्रा दलहन का आटा व थोड़ी सी खेत की एक मुट्ठी मिट्टी को मिलाकर बनायें। उसे दो दिन तक बोरे से ढ़क कर हल्का सा पानी छिड़क कर रख दें व बाद में उसके लड्डू बनाकर खेत में फसलों में उपयोग करें।

देशी गाय का गोबर- 100 किलोग्राम, देशी गाय का मूत्र- थोड़ी मात्र में, गुड़- 1 किलोग्राम, दलहन का आटा- 2 किलोग्राम, खेत की मिट्टी- मुठ्ठी भर।

उपयोग विधि- इन सभी पदार्थों को मिलाकर लड्डू जैसा बना लें व इसका उपयोग फसलों में करें।

बीजा मृत - बीजा मृत को गाय के गोबर, मूत्र, तथा चूने से तैयार किया जाता है। जिसका उपयोग बीज को कीट व मृदा जनित रोगों से बचाव के लिये बीज उपचार के रूप में किया जाता है। वैज्ञानिक अनुसंधान से दलहनी फसल चना, मसूर, सोयाबीन, तुअर, उड़द, मूँग आदि को बीजामृत से बीज उपचार कर बुवाई करने से अंकुरण प्रतिशत, अंकुर वृद्धि और बीज ओज सूचकांक में वृद्धि होती है।

देशी गाय का गोबर - 5 किलोग्राम, देशी गाय का मूत्र-5 लीटर, चूना 250 ग्राम, पानी-20 लीटर, खेत की मिट्टी- मुठ्ठी भर।

उपयोग विधि - इन सभी पदार्थों को पानी में 24 घंटे तक रखें। दिन में दो बार लकड़ी से हिलायें, इसके बाद बीज के ऊपर बीजामृत डालकर उपचारित करें व छाया में सुखाकर बुवाई करें।

आच्छादन (पलवार)- आच्छादन से अभिप्राय भूमि की ऊपरी सतह को ढाकना यह भूमि की सजीवता और उर्वरा शक्ति को ''सुरक्षित और संरक्षित'' करने का कार्य आच्छादन करता है।

भूसा आच्छादन- स्ट्र मल्च सबसे अच्छी मल्च सामग्री में से एक है। भूसा मल्च का उपयोग सब्जियों की खेती में अधिक किया जाता है। धान व गेहूँ का भूसे का उपयोग सब्जियों की खेती में कर सकते हैं।

व्हापसा - पौधों को विकास व बढ़वार के लिये पौधों की जड़ों को पानी चाहिये वास्तव में पौधों की जड़ों को पानी नहीं चाहिए, बल्कि पौधों की जड़ों को नमी चाहिए। पौधों को अधिक बढ़ने के लिए अधिक पानी की जरूरत नहीं होती और पौधे व्हापसा यानी भाप की मदद से भी बढ़ सकते हैं।

पुनर्योजी कृषि

पुनर्योजी कृषि प्रणालियों का मुख्य लक्ष्य लाभकारी कृषि उत्पादों का उत्पादन करते हुए मृदा की गुणवत्ता और जैव विविधता को बढ़ाना है।

पुनर्योजी कृषि की कोई सार्वभौमिक परिभाषा नहीं है। इस शब्द का तात्पर्य अक्सर मृदा में उपस्थित कार्बनिक पदार्थों को बहाल करके मृदा के स्वास्थ्य को बढ़ावा देना है। पुनर्योजी कृषि क्रियाओं का लक्ष्य कार्बनिक पदार्थों का उपयोग करना है।

पुनर्योजी कृषि के मुख्य पांच सिद्धांत

1. प्राकृतिक खेती के कुछ मूल सिद्धान्त हैं। मिट्टी में जीवाणुओं की मात्रा, भूमि की उत्पादकता का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। ये जीवाणु मिट्टी, हवा और कृषि-अवशेषों/बायोमास में प्राकृतिक रूप से उपलब्ध पोषक तत्वों को पौधों के प्रयोग लायक बनाते हैं। कीटनाशक फसल के लिये हानिकारक कीटों के साथ-साथ मित्र जीवों को भी मारते हैं। रासायनिक खादें भी मिट्टी में जीवाणुओं के पनपने में बाधा पैदा करती हैं इसलिये सबसे पहला काम है मिट्टी में जीवाणुओं की संख्या बढ़ाना। इसके लिए जरूरी है कि कीटनाशकों तथा अन्य रसायनों का प्रयोग न किया जाए।
2. अगला सिद्धान्त यह है कि खेत में जैव-विवधता होनी चाहिये, यानी कि केवल एक किस्म की फसल न बो कर खेत में एक ही समय पर कई किस्म की फसल बोनी चाहिये। जैव-विवधता या मिश्रित खेती मिट्टी की उत्पादकता बढ़ाने और कीटों का नियंत्रण करने, दोनों में सहायक सिद्ध होती है। जहाँ तक

सम्भव हो सके हर खेत में फली वाली या दलहनी एवं कपास, गेहूँ या चावल जैसी एक दाने वाली फसलों को मिला कर बोएं। दलहनी या फली वाली फसल यानी कि कपास इत्यादि की भी एक ही किस्म को न बो कर भिन्न-भिन्न किस्मों का प्रयोग करना चाहिए। फसल-चक में भी समय-समय पर बदलाव करना चाहिये।

1. मृदा जुताई को कम करना

मृदा को ढकना

मृदा के निर्माण या पुनर्जीवित करने के लिए मृदा कवच सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण है। हरी फसलों की एक परत मृदा की सतह को हानिकारक सूरज की किरणों और ठंड से बचाव करती है। यह मृदा की जलधारण क्षमता को बढ़ाने एवं बेहतर पोषक चक्र को गति प्रदान करती है।

पुनर्योजी कृषि पद्धतियों में निम्नलिखित कृषि पद्धतियां शामिल हैं:

1. कम जुताई वाली खेती

कम जुताई वाली खेती मृदा से छेड़छाड़ को कम करने का अभिन्न अंग है। इस तकनीक में डिस्क प्लांटर्स या विशेष ड्रिलर के माध्यम से चरागाह फसल बोते हैं। फसल विविधीकरण को बढ़ावा देने और उत्पादकता में सुधार के लिए बारहमासी चारागाहों में निष्क्रिय वार्षिक पौधों की बुआई की आवश्यकता होती है।

2. जैविक फसल

जैविक खेती में पर्यावरण के अनुकूल रूप में जैविक कीटनाशकों और उर्वरकों, जैसे खाद, पशु खाद और पौधों के कचरे का उपयोग होता है। इसके जैविक कृषि पद्धतियों के पारिस्थितिक लाभों में मृदा के कटाव को कम करना, भूजल में पोषक तत्वों की न्यूनतम लींचिंग और अपशिष्ट पदार्थों के उपयोग शामिल हैं।

3. बारहमासी फसलें

बारहमासी फसलें लगाना एक मृदा कवच विधी है। यह हवा और पानी जैसे वाहक कारको द्वारा क्षरण को कम करने, रासायनिक पदर्थो और जुताई कार्यो की आवश्यकता को कम करने के लिए उपयोगी है।

4. कृषि वानिकी/वन चारा

कृषि वानिकी में पेड़ों, झाड़ियों, ताड़ और बांस को व्यापक जड़ प्रणालियों के साथ लगाया जाता है, ताकि फसलों को तेज हवाओं और बारिश से बचाया जा सके। दूसरी ओर वन चारागाह में समान उत्पादक कृषि में जानबूझकर पशुधन, पेड़ और चारा का प्रबंधन शामिल करते हैं। ये दोनों प्रथाएं सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय लाभों में वृद्धि के लिए उत्पादन में विविधता लाती हैं और उसे बनाए रखती हैं।

शुरु कैसे करें

- जहिर है छोटा किसान जो खेती पर ही पुरी तरह से निर्भर है एकदम से पूरी तरह कुदरती खेती नहीं अपना सकता वह रोजी रोटी का खतरा मोल नहीं ले सकता परन्तु यह विश्वास है कि अगर पैदावर घटी भी तो 2-3 साल में वापिस बढेगी। और मौजूदा रास्तें पर चलना खतरनाक है तो इस शुरुआती जोखिम को हम आगे के लिए निवेश समझ सकते है। इसलिए हम अपनी जमीन के उतने हिस्से आधा एकड़ या एक दो एकड़ से शुरु कर सकते हैं। जितने की थोड़े समय के लिए आमदनी घटने का खतरा उठा सकते है। अपने खेत के इतने हिस्से में पूरी तरह से रासायनिक खाद और कीटनाशकों का प्रयोग बंद कर दें। परंतु यह ध्यान रहे कि केवल यूरिया इत्यादि का प्रयोग बंद कर देने से काम नहीं चलेगा। उससे तो उपज घटेगी ही। हमें इसके साथ-साथ प्राकृतिक खेती के दूसरे सारे उपाय भी इस टुकड़े में भी करने होंगे। इसके साथ-साथ बाकि खेत में भी इन सारे उपायो में से जितने अपनाये जाए वो हमें अपनाने चाहिए।
- कई लोग यह सोच कर शुरुआत नहीं कर पाते कि अगर हम कीट नाशकों का प्रयोग बंद का देंगें परंतु पड़ोसी कीटनाशक का प्रयोग करते रहेंगें तो हमारे खेत में कीटों का प्रयोग बढ़ जाएगा। यह डर गलत है। पड़ोसियों कर को छोड़िये। अगर कोई किसान अपने खेत के एक हिस्से में कीट नाशकों का प्रयोग बंद करता है और बाकि हिस्से में वह रासायन का प्रयोग करता रहे तो भी उसे नुकसान नहीं होगा।
- फसल कटाई के बाद, पशुओं के चरने, से जैविक खाद में बदलने को बढ़ावा मिलता है।
- खेत में अगर बायोमास की 2-4 इंच की परत बन जाये तो बहुत अच्छा है। यह परत कई काम करती है। वाष्पीकरण कम करके पानी बचाती है, बारिश और तेज हवा-आंधी में मिट्टी को बचाती है। खरपतवार की रोकथाम करती है। तापमान नियंत्रित करके ज्यादा गर्मी-सर्दी में भी मिट्टी के जीवाणुओं के लिये उपयुक्त माहौल बनाती है और उनका भोजन बनाती है और आखिर में गल-सड़ कर मिट्टी की उपजाऊ शक्ति बढ़ाती है। जमीन ढकने के लिये बायोमास के छोटे टुकड़े करके डालना बेहतर रहता है। बायोमास के तौर पर चौड़े पत्ते और मोटी टहनी का प्रयोग नहीं करना चाहिये।

निष्कर्षः

जैविक विधि द्वारा खेती करने से उत्पादन की लागत तो कम होती ही है इसके साथ ही कृषक भाईयों को आय अधिक प्राप्त होती है तथा अंतर्राष्ट्रीय बाजार की स्पर्धा में जैविक उत्पाद अधिक खरे उतरते हैं। जिसके फलस्वरूप सामान्य उत्पादन की अपेक्षा कृषक भाई अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। प्राकृतिक खेती का उद्देश्य एक कृषि पारिस्थितिकी ढांचे को अपनाए जाने को बढ़ावा देकर जलवायु परिवर्तन की अनिश्चितताओं से जुड़े जोखिमों को कम करना है। यह किसानों को कम लागत वाले घरेलू इनपुट का उपयोग करने, रासायनिक उर्वरकों और औद्योगिक कीटनाशकों के उपयोग को बंद करने के लिए प्रोत्साहित करता है। यह पारंपरिक कृषि की तुलना में प्रति इकाई क्षेत्र में बेहतर पर्यावरणीय प्रदर्शन दिखाता है।

जैविक एवं प्राकृतिक खेतीः एक आदर्श कृषि तकनीक

धीरज पाटीदार, थ्रम्बो तायु एवं नीतू सरोज

[1]उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी (उ. प्र.)

ई-मेलः tayuthrombo@gmail.com

सारांश

यू.एस.डी.ए. के अनुसार ''जैविक खेती एक ऐसी प्रणाली है जो सिंथेटिक इनपुट (जैसे उर्वरक, कीटनाशक, हार्मोन, फीड एडिटिव्स आदि) के उपयोग से बचती है या काफी हद तक इसे बाहर कर देती है। जैविक खेती फसल उगाने की एक नई तकनीक है जिसमें रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के बजाय हरी खाद, गोबर की खाद और वर्मीकम्पोस्ट जैसे जैविक खादों का उपयोग किया जाता है। जैविक खेती से पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर अकार्बनिक रसायनों से होने वाले दुष्प्रभाव कम हो जाते हैं और मिट्टी की उर्वरता भी बढ़ती है। इसलिए, यह पर्यावरण-अनुकूल कृषि पद्धति है। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में इस पद्धति से खेती करने से खेतों में फसल तो आती है लेकिन धीरे-धीरे मिट्टी की सारी उर्वरा शक्ति खत्म हो जाती है।

जैविक खेती के चार सिद्धांत हैं

- **स्वास्थ्य का सिद्धांतः** जैविक कृषि को मिट्टी, पौधे, पशु, मानव और ग्रह के स्वास्थ्य को एक और अविभाज्य के रूप में बनाए रखना और बढ़ाना चाहिए।
- **पारिस्थितिकी का सिद्धांतः** इस सिद्धांत में कहा गया है कि उत्पादन पारिस्थितिक प्रक्रियाओं और विशिष्ट उत्पादन वातावरण के पुनर्चक्रण पर आधारित होना चाहिए। जैविक प्रबंधन को स्थानीय परिस्थितियों, पारिस्थितिकी, संस्कृति और पैमाने के अनुसार अनुकूलित किया जाना चाहिए।
- **निष्पक्षता का सिद्धांतः** प्राकृतिक और पर्यावरण का प्रबंधन इस तरह से किया जाना चाहिए जो सामाजिक और पारिस्थितिक रूप से उचित हो और इसे भावी पीढ़ियों के लिए भरोसे में रखा जाना चाहिए। निष्पक्षता के लिए उत्पादन, वितरण और व्यापार की ऐसी प्रणालियों की आवश्यकता होती है जो खुली और न्यायसंगत हों और वास्तविक पर्यावरणीय और सामाजिक लागतों का हिसाब रखती हों।
- **देखभाल का सिद्धांतः** स्वास्थ्य और पर्यावरण की रक्षा के लिए जैविक कृषि को एहतियाती और जिम्मेदार तरीके से प्रबंधित किया जाना चाहिए। यह सिद्धांत बताता है कि कृषि में सावधानी और जिम्मेदारी प्रमुख चिंताएं हैं।

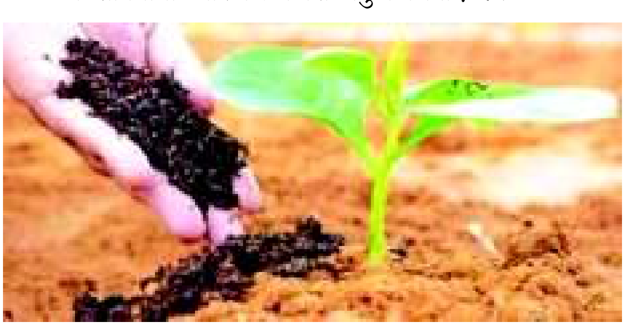

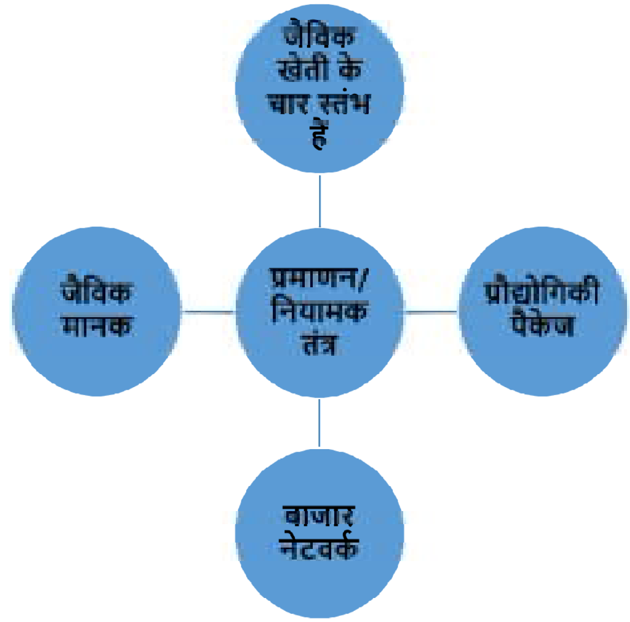

प्राकृतिक खेतीः

प्राकृतिक खेती जैविक खेती से भिन्न है जहाँ फार्मयार्ड खाद और वर्मी-कम्पोस्ट जैसी जैविक खादों का उपयोग नहीं किया जाता है। जापान में, फुकुओका ने प्रकृति के साथ प्रयोग करके और फसल प्रसार के प्राकृतिक तरीकों का पालन करके प्रोंतिक खेती शुरू की। प्राकृतिक खेती का सार कृषि भूमि में बाहरी इनपुट को कम करना है जो मिट्टी की प्रकृति में गिरावट का कारण बनता है। प्राकृतिक खेती का उद्देश्य मिट्टी के स्वास्थ्य को बहाल करना है, विविधता का रखरखाव, पशु कल्याण सुनिश्चित करना और पारिस्थितिक निष्पक्षता को बढ़ावा देना। प्राकृतिक खेती एक पारिस्थितिक कृषि दृष्टिकोण है जहाँ खेती प्रणाली प्राकृतिक जैव विविधता के साथ काम करती है, मिट्टी की जैविक गतिविधि को प्रोत्साहित करती है और खाद्य

उत्पादन प्रणाली के साथ-साथ पौधों और जानवरों दोनों के जीवित जीवों की जटिलता का प्रबंधन करती है। प्राकृतिक खेती प्रणाली में विभिन्न प्रथाएं शामिल हैं।

कोई जुताई प्रणाली नहीं– इस अभ्यास में, जुताई से बचा जाता है ताकि मिट्टी में नमी की मात्रा बढ़े, केंचुओं के प्रसार में वृद्धि हो जो मिट्टी को छिद्रपूर्ण बनाने और मिट्टी को कार्बनिक पदार्थों से समृद्ध करने में सहायक होते पिछली फसल काटने से पहले बीजों को बिखेर दिया जाता है और पुआल से ढ़क दिया जाता है।

मल्चिंग– मल्चिंग में, अनाज की फसलें और स्वस्थ बगीचे के पेड़ सब्जियों, खरपतवारों और सफेद तिपतिया घास के साथ उगाए जाते हैं। पुआल से मल्चिंग करने से मिट्टी की नमी में सुधार होता है और सूक्ष्मजीवों और केंचुओं के विकास में मदद मिलती है। फलियां जैसी ढ़की हुई फसलें उगाने से मिट्टी में नाइट्रोजन स्थिरीकरण बढ़ जाता है। इससे मिट्टी में कार्बनिक कार्बन की मात्रा भी बढ़ जाती है। यह अभ्यास फसल प्रभावित क्षेत्र में शाकनाशियों से बचने में मदद करता है।

बीजामृत– प्राकृतिक खेती में बीजामृत का प्रयोग किया जाता है। यह गाय के गोबर, गोमूत्र, चूने और मुट्ठी भर मिट्टी से तैयार एक बीज उपचार मिश्रण है। बताया गया है कि बीजामृत से बीज उपचार फसल को हानिकारक मिट्टी जनित रोगजनकों से बचाता है और विभिन्न हार्मोनों के उत्पादन में भी सहायक होता है।

जीवामृत– मिट्टी के सूक्ष्मजीव मिट्टी की उर्वरता में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। चूँकि वे कार्बन और नाइट्रोजन जैसे पोषक तत्वों के चक्र में शामिल होते हैं, जो पौधों के विकास के लिए आवश्यक हैं। सूक्ष्मजीव मिट्टी में प्रवेश करने वाले कार्बनिक पदार्थों के अपघटन के लिए जिम्मेदार होते हैं और इसलिए मिट्टी में पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण में पीजीपीआर, साइनोबैक्टीरिया और माइकोराइजा मिट्टी के सूक्ष्मजीवों का निर्माण करते हैं। वे पौधों को अपघटन, खनिजकरण और पोषक तत्व आपूर्ति में भी भाग लेते हैं। मिट्टी सभी पोषक तत्वों से संतृप्त है, लेकिन ये पौधों की जड़ों तक अनुपलब्ध रूप में हैं। जीवामृत में लाभकारी सूक्ष्मजीव पोषक तत्वों को अनुपलब्ध रूप में घुलनशील रूप में परिवर्तित कर देते हैं, जब इसे मिट्टी में डाला जाता है। जीवामृत का या तो फसल के खेत में छिड़काव किया जाता है या पंद्रह दिनों के नियमित अंतराल में सिंचाई टैंक में डाला जाता है जब तक कि मिट्टी इससे समृद्ध न हो जाए।

देश के मध्य भाग में स्थित बुन्देलखण्ड क्षेत्र अत्यधिक जल निकासी (हल्की मिट्टी के कारण), कम मिट्टी की गहराई, बहुत कम पानी के कारण अज्ञात, कम उपजाऊ और खराब विकसित मिट्टी के लिए जाना जाता है। इस क्षेत्र में मिट्टी की सतह पर अवधारण क्षमता और कार्बनिक पदार्थ की कम सामग्री और परत के गठन का भी बार-बार सामना करना पड़ा है।

वर्षा की कमी और असमानता के कारण 2004 से 2007 तक सूखा पड़ा, जिसके कारण फसल योजना, नीति निर्माण और हस्तक्षेप योजनाओं के विकास में विसंगति हुई। बुन्देलखण्ड क्षेत्र मध्य भारत में लगभग 7.16 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में फैला हुआ है। बुन्देलखंड क्षेत्र की वार्षिक वर्षा निम्न से मध्यम है। मिट्टी में कार्बनिक कार्बन (ओसी), उपलब्ध पोषक तत्व (पौधे उपलब्ध एन और पी), और जल धारण क्षमता भी कम है। इन मिट्टी की उत्पादकता निम्न से मध्यम श्रेणी की होती है। इस मिट्टी की स्थितियों में पेडोजेनिक और कृत्रिम कारकों के आधार पर परिवर्तनशीलता मौजूद हो सकती है। भारत में विशेष रूप से देश के मध्य भागों में उच्च वाष्पीकरण, उच्च तापमान और विरल वनस्पति के साथ जलवायु अर्ध-शुष्क है। इन कारकों का अस्थिरता और निक्षालन के रूप में पोषक तत्वों के नुकसान पर भारी प्रभाव पड़ता है जो इस क्षेत्र में पाई जाने वाली हल्की मिट्टी के कारण होता है। इन क्षेत्रों में कृषि गतिविधियाँ जलवायु परिवर्तन और विभिन्न सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के दबाव में हैं। ये सभी कारक अन्य कारकों के साथ मिलकर इन मिट्टी को कम उपजाऊ और कृषि के लिए उपयोग के लिए खराब बनाते हैं। जापान में, फुकुओका ने प्रकृति के साथ प्रयोग करके और फसल प्रसार के प्राकृतिक तरीकों का पालन करके प्राकृतिक खेती शुरू की।

बुन्देलखण्ड घरेलू और कृषि उपयोग के लिए काफी हद तक उथले भूजल संसाधनों पर निर्भर है। क्षेत्र के किसान खरीफ (गीले मौसम) के दौरान कम पानी की खपत वाली फसलें जैसे मूँगफली, उड़द, तिल और बाजरा, और गेहूँ, चना, जौ, सरसों और उगाते हैं। रबी (शुष्क) मौसम के दौरान दाल। गीले मौसम (मूँगफली) के दौरान उगाई जाने वाली फसलों को सूखे के दौरान पूरक सिंचाई की आवश्यकता हो सकती है, जबकि शुष्क मौसम में उगाई जाने वाली अधिकांश फसलों (चना, जौ और गेहूँ) को सिंचाई सहायता की आवश्यकता होती है। इन खेती के तरीकों की मदद से इस क्षेत्र की मिट्टी में अधिक नमी और कार्बनिक कार्बन के साथ अन्य मैक्रो और सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता होगी क्योंकि इन दोनों खेती में कोई रासायनिक उर्वरक नहीं होता है। केवल जैविक और प्राकृतिक स्रोत जैसे बीजामृत, जीवामृत, फार्मयार्ड खाद, वर्मीकम्पोस्ट और अन्य स्रोत जो इस क्षेत्र की मिट्टी और फसल उत्पादकता में सुधार करेंगे जो किसानों और राष्ट्र के आर्थिक स्रोत के लिए फायदेमंद होंगे।

निष्कर्षः

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में किसानों की समृद्धि के लिए जैविक एवं प्राकृतिक खेती एक वैकल्पिक कृषि प्रणाली है। ये कृषि प्रणाली न केवल स्वस्थ मिट्टी का निर्माण करती है बल्कि यह गंभीर मिट्टी, पानी और जलवायु परिवर्तन के मुद्दों से निपटने में भी मदद करती है। अन्य लोगों ने जैविक और रासायनिक रूप से उपचारित क्षेत्रों की तुलना करते हुए कहा कि जैविक और प्राकृतिक क्षेत्र में अधिक इंच की ऊपरी मिट्टी और नमी का संरक्षण होता है। डॉ. इलेन इंघम के अनुसार, केवल एक चम्मच खाद युक्त जैविक मिट्टी में 600 मिलियन से एक अरब तक सहायक बैक्टीरिया हो सकते हैं, जबकि रसायनों से उपचारित मिट्टी में 100 से अधिक सहायक बैक्टीरिया हो सकते हैं जो मिट्टी के स्वास्थ्य के लिए सहायक होते हैं। इन आधारों पर जैविक और प्राकृतिक खेती बुन्देलखण्ड के किसानों के लिए अधिक उपयुक्त है क्योंकि इससे अंततः उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति बेहतर होगी।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधनः मृदा पोषण में प्राकृतिक एवं नवीन विधियां

यूमनाम बीजीलक्ष्मी देवी[1] एवं थौनौजम थॉमस मीतेई[2]

[1]उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, [2]कृषि महाविद्यालय

रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झांसी (उ. प्र.)

ई-मेलः bijilaxmirlbcau@gmail.com

सारांश

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन का तात्पर्य एकीकृत तरीके से कार्बनिक, अकार्बनिक और जैविक घटकों का उपयोग करना है। मिट्टी की उर्वरता और पौधों के पोषक तत्वों की आपूर्ति को इष्टतम स्तर पर बनाए रखने के लिए इन सभी स्रोतों के लाभ से इच्छित उत्पादकता को बनाए रखना इस तकनीक का मुख्य उद्देश्य हैं। दूसरे शब्दों में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन कृषि उत्पादन, मृदा उत्पादकता तथा पर्यावरण संरक्षण का एक साथ समावेशन करने हेतु मृदा को खाद एवं उर्वरक की सन्तुलित मात्रा प्रदान करना कहलाता है। पर्यावरणीय प्रभाव में, आधुनिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन, पोषक तत्व उपयोग दक्षता को बढ़ाकर उर्वरक के अधिक प्रयोग से जुड़े खतरों को कम करता है। फसल चक्र, आवरण फसल और संतुलित पोषक प्रबंधन जैसी प्रथाओं का समावेश मिट्टी के दीर्घकालिक स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण हैं। एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन एक प्रगतिशील और जिम्मेदार मार्ग का प्रतिनिधित्व करता है जो कृषि के भविष्य को बेहतर और धारणीय बनाएगा।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन की धारणाएँ

- इष्टतम फसल वृद्धि और उच्च उत्पादकता के लिए विनियमित पोषक तत्व आपूर्ति
- मृदा उर्वरता में सुधार एवं रखरखाव
- जैविक खाद, अकार्बनिक उर्वरक और जैव-इनोकुलेंट के संतुलित उर्वरक द्वारा कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र की गुणवत्ता पर शून्य प्रतिकूल प्रभाव

पोषक तत्वों के स्रोत

- **मिट्टी** - मिट्टी में कई पोषक तत्व उपस्थित होते हैं, जो पौधे अपनी वृद्धि के लिए उपयोग कर सकते हैं।
- **अकार्बनिक उर्वरक** - कार्बनिक उर्वरक मानव निर्मित फार्मूले हैं जिन्हें पोषक तत्व की रिहाई के विभिन्न गति के लिए तैयार किया जा सकता है। इन उर्वरकों में सबसे आम हैं यूरिया, सिंगल सुपर फॉस्फेट और म्यूरेट ऑफ पोटाश। कीटनाशक ऐसे पदार्थ हैं जो कीटों या खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए होते हैं। ये सभी उर्वरक पौधों के विकास के लिए आवश्यक हैं।

चित्रः एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के घटक

- **जैविक खाद** - फसल की बेहतर वृद्धि व पोषण के लिए जीवधारियों या उनके अवशेषों के उपयोग को जैविक पोषक तत्व या जैविक खाद कहा जाता है। जैविक खाद का उद्देश्य उन सभी कार्बनिक पदार्थों से है जो कि सड़ने या गलने पर जीवांश पदार्थ या कार्बनिक पदार्थ पैदा करती है। इन खादों का महत्व पर्यावरण को टिकाव बनाने में है। यह घटक पौधों को पोषक तत्व के साथ साथ पर्यावरण संरक्षण में काम आता है।
- **हरी खाद** - खाद के रूप में उपयोग किये जाने वाले हरे अविभाजित पदार्थ को हरी खाद कहते हैं। इसे दो तरीकों से प्राप्त किया जाता हैः हरी खाद वाली फसलें उगाने से या बंजर भूमि, खेत के मेड़ों और जंगल में उगाए गए पौधों से हरी पत्ती (टहनियों के साथ) इकट्ठा करके। हरी खाद खेतों में उगने वाले पौधों में होती है जो आमतौर पर फलियां परिवार से संबंधित होते हैं और पर्याप्त वृद्धि के बाद मिट्टी में मिल जाते हैं। हरी खाद के लिए उगाए जाने वाले पौधों को हरी खाद वाली फसलें कहा जाता है। सबसे महत्वपूर्ण हरी खाद वाली फसलें हैं सनहेम्प, ढैंचा, सेसबानिया आदि।
- **जैव उर्वरक** - जैव उर्वरक को जीवित सूक्ष्मजीवों वाले जैविक उत्पादों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो बीज, पौधे की सतह या मिट्टी पर डालने से, कई तंत्रों द्वारा विकास

को बढ़ाता हैं जैसे पोषक तत्वों की आपूर्ति में वृद्धि, जड़ बायोमास या जड़ क्षेत्र में वृद्धि और पौधे की पोषक तत्व ग्रहण क्षमता में वृद्धि।

इन स्रोतों को समजने से, इनकी महत्व के बारे में पता चलता है जो की इन घटकों को अनुकूलित रूप से जब तक मिट्टी पर मिलाया न जाए, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन सफल नहीं हो सकता।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के लाभ

- प्रयुक्त और पैदाइशी मिट्टी के पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाता हैं।
- फसल की पोषक तत्वों की माँग को प्रयुक्त और पैदाइशी स्रोतों से पोषक तत्वों की उपलब्धता के साथ मिलाता है।
- फसलों को संतुलित पोषण प्रदान करता है और छिपी हुई कमियों और पोषक तत्वों के असंतुलन के परिणाम स्वरूप होने वाले प्रतिकूल प्रभावों को कम करता है।
- मिट्टी की भौतिक, रासायनिक और जैविक कार्यप्रणाली में सुधार और देखभाल करता है।
- कार्बन पृथक्करण को बढ़ावा देकर, जमीन और सतह के जल निकायों और वायुमंडल में पोषक तत्वों के नुकसान को कम करके मिट्टी, पानी और पारिस्थितिकी तंत्र की गिरावट को कम करता है।

मृदा पोषण में प्राकृतिक विधियां

पारंपरिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन पौधों की पोषक तत्वों की आवश्यकताओं को पूरा करने के प्राथमिक साधन के रूप में सिंथेटिक रासायनिक उर्वरकों पर बहुत अधिक निर्भर करता है। इस दृष्टिकोण में आमतौर पर मिट्टी में नाइट्रोजन (एन), फॉस्फोरस (पी), और पोटेशियम (के) के विशिष्ट अनुपात का अनुप्रयोग शामिल होता है। पारंपरिक प्रथाओं का एक बड़ा दोष, खाद, कम्पोस्ट और फसल अवशेषों जैसे जैविक आदानों पर सीमित जोर है। इस निरीक्षण के परिणाम स्वरूप मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा कम हो जाती है, जिसके परिणाम स्वरूप संभावित मिट्टी के स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं पैदा हो सकती हैं। इसके अलावा, रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से मिट्टी के विनाश होने का बड़ा खतरा पैदा होता है, जिससे मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों पर असर पड़ता है। इन उर्वरकों वाले खेतों से नीकला जल, प्रदूषण में योगदान कर सकता है, जिससे पर्यावरणीय चिंताएँ बढ़ सकती हैं।

इसके अतिरिक्त, पारंपरिक कृषि अक्सर मोनोकल्चर को बढ़ावा देती है, जिससे फसलों द्वारा पोषक तत्वों के अवशोषण में असंतुलन और मिट्टी के पोषक तत्वों की कमी होती है। इस दृष्टिकोण में रासायनिक उर्वरकों का उच्च उपयोग भी ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में योगदान देने में भूमिका निभाता है, जिससे इसके नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभाव बड़ जाती है।

समय के साथ एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन का विकास

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन समय के साथ विकसित हुआ है, जिसमें कृषि में पोषक तत्व प्रबंधन के लिए अधिक टिकाऊ और कुशल दृष्टिकोण बनाने के लिए वैज्ञानिक ज्ञान, पर्यावरणीय विचारों और तकनीकी प्रगति को एकीकृत किया गया है।

पिछले 50 वर्षों में, मिट्टी की उर्वरता के मुद्दों को संबोधित करने के उद्देश्य से चल रहे अनुसंधान और विकास प्रयासों के अनुरूप में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन दृष्टिकोण की विचार विकसित हुई है। 1960 और 1970 के दशक में, फसल उत्पादन बढ़ाने के लिए प्राथमिक ध्यान बाहरी उत्पादक सामग्री, मुख्य रूप से खनिज उर्वरकों के उपयोग पर था। यह दृष्टिकोण एशिया और लैटिन अमेरिका में हरित क्रांति की सफलता से प्रभावित था, जिसमें उर्वरक, चूना और सिंचाई जल जैसे उत्पादक सामग्री के उपयोग पर जोर दिया गया था। हालाँकि, बुनियादी ढांचे, नीति और कृषि प्रणालियों में चुनौतियों के कारण इस रणनीति को सीमित सफलता का सामना करना पड़ा। 1980 के दशक में, जैविक आदानों की ओर बदलाव आया, लेकिन इस दृष्टिकोण को सीमित रूप से अपनाया गया क्योंकि इसके लिए पशुधन, पर्याप्त भूमि और श्रमिक जैसे महत्वपूर्ण संसाधनों की आवश्यकता थी। 1990 के दशक तक, एक संतुलित दृष्टिकोण उभरा, जिसमें कार्बनिक पदार्थ और खनिज उर्वरक दोनों के उपयोग पर जोर दिया गया, जिसमें कार्बनिक पदार्थ प्रवेश बिंदु के रूप में काम कर रहे थे। इस अवधि में मिट्टी की उर्वरता प्रबंधन के लिए एक समग्र दृष्टिकोण के रूप में एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन की व्यापक परिभाषा देखी गई, जिसमें मिट्टी के विनाश के जैविक, भौतिक, रासायनिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक पहलुओं सहित विभिन्न मामलों और परिणामों पर विचार किया गया। इससे विशिष्ट फसलों के आसपास स्थानीयकृत अपनाने और एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन पर जोर दिया गया। हाल के वर्षों में, अनुसंधान ने संतोषजनक फसल पैदावार और कुशल उर्वरक उपयोग दक्षता प्राप्त करने के लिए स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल खनिज उर्वरकों और जैविक संसाधनों के संयोजन पर ध्यान केंद्रित किया है। यह चल रहा विकास मिट्टी की उर्वरता प्रबंधन की पेचीदगी की समझ को दर्शाता है, जिसमें टिकाऊ और अनुभवी

कृषि पद्धतियों को प्राप्त करने के लिए विविध तत्वों को शामिल किया गया है।

मृदा पोषण में नवीन विधियां

आधुनिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन, रासायनिक उर्वरकों, जैविक खाद, हरी खाद और जैव उर्वरक सहित विविध पोषक स्रोतों पर जोर देकर एक समग्र दृष्टिकोण अपनाता है। इस रणनीति का उद्देश्य पोषक तत्वों की उपलब्धता को अनुकूलित करना और मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाना है। आधुनिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन में जैविक आदानों का एकीकरण एक प्रमुख केंद्र है, जिसमें मिट्टी की संरचना, जल प्रतिधारण और माइक्रोबियल गतिविधि में सुधार के लिए खाद और कम्पोस्ट जैसी सामग्रियों को शामिल करने को प्राथमिकता दी गई है।

इसके अतिरिक्त, यह अक्सर जैविक कृषि पद्धतियों को एकीकृत करता है, जो टिकाऊ और लचीली कृषि प्रणालियों में योगदान देता है। सटीक कृषि तकनीकें आधुनिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन का अभिन्न अंग हैं, विभिन्न फसलों और मिट्टी के प्रकारों की विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार पोषक तत्वों के अनुप्रयोगों को तैयार किया जाता हैं और इसके लिए मिट्टी परीक्षण और पोषक तत्व मानचित्रण जैसी प्रौद्योगिकियों का उपयोग किया जाता है, जिससे पोषक तत्व उपयोग दक्षता का अनुकूलन होता है।

फसल चक्र और आवरण फसल को बढ़ावा देना एक अन्य पहलू है, जो पौधों की प्रजातियों के विविधीकरण को प्रोत्साहित करता है और कीट और रोग चक्र को तोड़ता है। इन पद्धतियों का बेहतर पोषक चक्र में योगदान रेहता है और अत्यधिक उर्वरीकरण की आवश्यकता को कम करता है।

पर्यावरणीय स्थिरता के संदर्भ में, आधुनिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन का लक्ष्य पोषक तत्वों के अपवाह और सिंथेटिक उर्वरकों से जुड़े उत्सर्जन को कम करके कृषि के पर्यावरणीय प्रभाव को कम करना है। यह पारिस्थितिक सिद्धांतों के अनुरूप है, दीर्घकालिक पर्यावरणीय स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है। अंत में, संतुलित पोषक तत्व प्रबंधन का दृष्टिकोण आधुनिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के केंद्र में है, जो मैक्रो और सूक्ष्म पोषक तत्वों दोनों पर विचार करते हुए, फसलों को संतुलित पोषक आपूर्ति प्रदान करने पर ध्यान केंद्रित करता है। इससे पोषक तत्वों की कमी या अधिकता को रोकने में मदद मिलती है जो अन्यथा फसल की उपज और गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकते हैं। कुल मिलाकर, आधुनिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन, कृषि में पोषक तत्व प्रबंधन के लिए अधिक पर्यावरण के प्रति जागरूक और टिकाऊ दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है।

निष्कर्षः

कृषि प्रणाली में पारंपरिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन से आधुनिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन में संक्रमण अधिक टिकाऊ और पर्यावरण के प्रति जागरूक दृष्टिकोण की ओर एक महत्वपूर्ण बदलाव डेखि गयी है। सिंथेटिक उर्वरकों पर भारी निर्भरता की सीमाओं को पहचानते हुए, आधुनिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन एक समग्र रणनीति अपनाता है जो पोषक तत्वों के विविध प्रकार के स्रोतों को एकीकृत करता है एवं खाद और कम्पोस्ट जैसे जैविक आदानों पर जोर देता है। इससे न केवल मिट्टी की संरचना और माइक्रोबियल गतिविधि में सुधार होता है बल्कि कृषि प्रणालियों के लचीलेपन और स्थिरता को भी बढ़ाती है।

पर्यावरणीय प्रभाव में, आधुनिक एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन, पोषक तत्व उपयोग दक्षता को बढ़ाकर उर्वरक के अधिक प्रयोग से जुड़े खतरों को कम करता है। फसल चक्र, आवरण फसल और संतुलित पोषक प्रबंधन जैसी प्रथाओं का समावेश मिट्टी के दीर्घकालिक स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण हैं। एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन एक प्रगतिशील और जिम्मेदार मार्ग का प्रतिनिधित्व करता है जो कृषि के भविष्य को बेहतर और धारणीय बनाएगा।

एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन में जीवाणु खाद की भूमिका

प्रियंका चंद्रा, पारुल सुन्धा, निर्मलेंदु बसक एवं अरविन्द कुमार राय
भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल- 132001, हरियाणा, भारत
ई-मेलः

परिचय

प्राचीन काल में मुख्य रूप से जैविक खादों का प्रयोग किया जाता था परन्तु 60 के दशक में हरित क्रांति के तत्पश्चात् रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग धीरे-धीरे बढ़ता गया जिससे उत्पादन में भी यथेष्ट वृद्धि हुई। प्रमुखतः नत्रजनिक उर्वरकों का प्रयोग हुआ लेकिन धीरे-धीरे फॉस्फेटिक एवं पोटेशिक उर्वरकों के महत्व को समझते हुए इनका प्रयोग भी होने लगा। फसल के उत्पादन की अत्यधिक वृद्धि करने के लोभ में रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग बेहिसाब होने लगा जिसके कारण पर्यावरण दूषित होने लगा तथा मानव स्वास्थ एवं मृदा स्वास्थ पर प्रभाव पड़ने लगा, साथ ही अधिकांश क्षेत्रों में उत्पादन में ठहराव आने लगा तथा उत्पादन में कमी भी देखी गयी। मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रियाओं में भी परिवर्तन हुआ है। इन्ही कारण से जैविक खादों पर फिर से ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है। गोबर की खाद, हरी खाद या फसल अवशेष द्वारा कुल पोषक तत्वों के 50 से 75 प्रतिशत आपूर्ति से फसल प्रणाली की उपज में वृद्धि होती है तथा मृदा उर्वरता भी बनी रहती है। अतः ये बहुत आवश्यक है की उर्वरता का संतुलन इस प्रकार किया जाये कि फसल की आवश्यकता के अनुसार पौधों को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध किये जाये, जिससे अधिक से अधिक उपज मिल सके और मृदा स्वस्थ्य एवं पर्यावरण सुरक्षित बना रहे। इसके लिए आवश्यकतानुसार अकार्बनिक एवं कार्बनिक स्रोतो से फसल को सभी तत्वों का निश्चित अनुपात में ग्रहण करना आवश्यक है। क्योंकि प्रत्येक तत्व का पौधों के अन्दर अलग-अलग कार्य एवं महत्व है जो विभिन्न अवस्थाओं में पूर्ण होता है। कोई एक तत्व दूसरे तत्व का पूरक नहीं है। यह संतुलन बिगड़ने पर उत्पादन सीधे प्रभावित होता है।

पौधों के लिये आवश्यक पोषक तत्व और उनकी कमी होनें पर समस्या

1) **नाइट्रोजन (छ)**: सभी जीवित ऊतकों यानि जड़, तना, पत्ति की वृद्धि और विकास मे सहायक है। क्लोरोफिल, प्रोटीन और न्यूक्लिक अम्लों का एक महत्वपूर्ण अवयव है। पत्ती वाली सब्जियों और चारे की गुणवत्ता में सुधार करता है। नाइट्रोजन की कमी से अत्यधिक पीला रंग होकर पत्तियाँ नुकीली हो जाती हैं और पौधा बोना रह जाता हैं।

2) **फास्फोरस (P)**: पौधों के वर्धनशील अग्रभाग, बीज और फलों के विकास के लिए आवश्यक है। कोशिका विभाजन, जड़ों एवं पुष्प के विकास में सहायक है तथा अमीनों अम्लों का अवयव है। फॉस्फोरस की कमी से पौधा छोटा और तना कमजोर होता हैं एवं पत्तियों के नीचे भाग में रंग में बदलाव आता है और पत्तियाँ गिर जाती हैं।

3) **पोटेशियम (K)**: एंजाइम की क्रियाशीलता बढाता है। पौधों द्वारा प्रकाश के उपयोग में वृद्धि करता है, कार्बोहाइड्रेट के स्थानांतरण, प्रोटीन संश्लेषण और इनकी स्थिरता बनाये रखने में मदद करता है। पोटेशियम की कमी से पत्तियाँ सिरों से सुखकर मुड़ जाती हैं, और सिरों पर छोटे-छोटे धब्बे बन जातें हैं।

4) **कैल्शियम (C)**: कैल्शियम कोशिका भित्ति और प्लाज्मा झिल्ली में विभिन्न संरचनात्मक भूमिकाओं के लिए आवश्यक है। कैल्सियम की कमी होने पर पौधा ऊपरी सिरें से सुखना शुरू करता हैं और फूल की कलियाँ गिर जाती हैं।

5) **मैगनिसियम (Mg)**: मैग्नीशियम शर्करा के परिवहन में सहयोग करता है और यह पर्णहरित या क्लोरोफिल अणुओं का एक महत्वपूर्ण भाग है। मैग्नेशियम की कमी होने पर पत्तियों के किनारें नुकीलें होकर पत्तियाँ झढ़ जाती हैं।

6) **सल्फर (S)**: सल्फर क्लोरोफिल निर्माण के लिए आवश्यक है, फलियों में गांठ बनने को बढ़ावा देता है, कुछ एंजाइम और विटामिनों को विकसित करने और सक्रिय करने में मदद करता है, और अमीनो एसिड का संरचनात्मक घटक है। यह फसल में स्वाद, तेल का प्रमाण, सुगंध, प्रोटीन के निर्माण में मदद करता है सल्फर की कमी होनें पर पत्तियाँ गहरी हरी होनें के बजाय हल्की हरी होनें लगती हैं और पत्तियों की शिरायें पीली पढ़ जाती हैं।

7) **क्लोरीन (Cl)**: क्लोरीन प्रकाश संश्लेषण के लिए आवश्यक है। पौधों में क्लोरीन की कमी से नई पत्तियाँ हरितहीन हो जाती हैं और पौधे आसानी से मुरझा जाते हैं।

8) **मेंगनीज (Mn)**: मैंगनीज प्रकाश संश्लेषण क्रिया के दौरान ऑक्सीजन के उत्पादन के लिए आवश्यक है। मैंगनीज की कमी से पत्तियाँ पीली पड़कर, शिरायें गहरी हरी हो जाती हैं, और पत्तियाँ गिर जाती हैं।

9) **जिंक (Zn)**: जिंक पौधों के चयापचय, एंजाइम कार्य और आयन परिवहन के लिए आवश्यक है। जिंक की कमी के कारण कल्ले कम बनते है पौधे की बढ़वार कम हो जाती है और पौधा छोटा रह जाता हैं।

10) **कापर (Cu)**: कापर कार्बोहाइड्रेट चयापचय, हीमोग्लोबिन निर्माण और विभिन्न अन्य चयापचय गतिविधियों के लिए आवश्यक है। पौधों में कॉपर की कमी से पत्तियाँ झुक जाती है।

11) **बोरान (B)**: बोरान कोशिका भित्ति का निर्माण, जैविक झिल्लियों की संरचना, कोशिका विभाजन, फल और बीज विकास, शर्करा परिवहन और हार्मोन विकास के लिए आवश्यक है। पौधों में बोरान की कमी से पत्तियों का रंग काला पढ़ जाता हैं, कलियाँ टूट जाती हैं एवं पौधे की वृद्धि रूक जाती हैं ।

12) **मालिब्डेनम (Mo)**: मालिब्डेनम एंजाइम नाइट्रेट रिडक्टेस के संश्लेषण और गतिविधि के लिए आवश्यक है। मालिब्डेनम की कमी से पत्तियों पर लाल धब्बे बन जातें हैं और नई पत्तियाँ सूख जाती हैं। मालिब्डेनम की कमी के लक्षण नाइट्रोजन की कमी के समान दिखाई देते हैं।

13) **आयरन (Fe)**: प्रकाश संश्लेषण, श्वसन और डीएनए संश्लेषण सहित चयापचय प्रक्रियाओं के लिए आयरन महत्वपूर्ण है। आयरन की कमी से पत्तियाँ पीली हो जाती हैं तथा नई पत्तियों में क्लोरोसिस के लक्षण दिखाई देते हैं।

एकींत पोषक तत्व प्रबन्धनः

रासायनिक उर्वरक के प्रयोग से फसल में वृद्धि होती है परन्तु अत्याधिक उपयोग से मृदा में जीवाणुओं की सक्रियता कम हो जाती है जिससे मृदा स्वास्थ पर कुप्रभाव पड़ता है। परिणामतः वैज्ञानिकों ने पोषक तत्व प्रबन्धन के लिए यह बताया कि कृषि उत्पादन, मृदा उत्पादकता तथा पर्यावरण संरक्षण को समावेशन कर जैव खादों, तथा रासायनिक उर्वरकों को विवेकपूर्ण ढंग से प्रयोग किया जाये तो मृदा एवं पर्यावरण संरक्षित रहेगें साथ ही फसलोत्पादन भी अधिक होगा। अतः इसे एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन की संज्ञा दी। एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन एक ऐसी विधि है जिसमें का कार्बनिक, अकार्बनिक और जैविक स्रोतों के मिश्रित उपयोग द्वारा पौधों को उचित मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध करवाये जाते हैं। इसके मुख्य उद्देश्य उर्वरक उपयोग क्षमता को अधिक करना, मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को बढ़ाना हैं ताकि लबे समय तक स्थाई कृषि द्वारा अधिक उत्पादन लिया जा सके। रासायनिक पोषक तत्वों का बहुत कम भाग पौधों को उपलब्ध होता है और शेष भाग व्यर्थ चला जाता है। जैसे कि नत्रजन उर्वरक के कुल भाग का 35 से 40 प्रतिशत, फॉस्फोरस उर्वरकों का 15 से 25 प्रतिशत और पोटाश उर्वरकों का 30 से 50 प्रतिशत भाग ही पौधों को उपलब्ध हो पाता है। एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन द्वारा उपयोग क्षमता को बढ़ाया तथा तत्वों की हानि को कम किया जा सकता है। एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन में उपयोग की जाने वाली कार्बनिक खादें जैसे गोबर की खाद, कम्पोस्ट तथा हरी खाद का प्रयोग प्राचीन काल से होता आ रहा है और इनका प्रभाव कई वर्षों तक रहता है क्योंकि इसके कार्बनिक पदार्थ धीरे-धीरे घुलते है। एकीकृत पोषक तत्व प्रणाली का एक विशेष महत्व इसलिए है क्योंकि बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए पर्याप्त मात्रा में कृषि उत्पाद अनिवार्य है वहीं प्राकृतिक सम्पदा जैसे मृदा एवं जल को संरक्षित करना और उन्हें दूषित होने से बचाना भी आवश्यक है। जरूरत पूरी करने के लिए हमें लगभग 350 मिलियन टन अनाज की पैदावार करनी होगी तथा अत्यधिक खेती से मृदा से अधिक में पोषक तत्व निकल जायेंगे एवं एकींत पोषक तत्व प्रबन्धन से मृदा की उर्वरकता एवं उत्पादन क्षमता बनी रहती है। एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन के निम्न चार घटक हैं (चित्र 1)

1. जैविक खाद
2. फसल अवशेष
3. जीवाणु खाद
4. रसायनिक खाद

चित्र 1: एकीकृत पोषक तत्व प्रबन्धन के चार प्रमुख घटक

एकीकृत पोषक प्रबन्धन के मुख्य उद्देश्य

1) पादप पोषकों के सभी प्रदूषण रहित स्रोतों जैसे- गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद, जैव उर्वरक तथा भूमि सुधारकों का उचित प्रयोग करना।

2) मृदा के भौतिक एवं रासायनिक गुण तथा उर्वरता का संधारण करना।

3) कृषि की उच्च उत्पादकता हेतु कार्बनिक खाद, हरी खाद, अकार्बनिक उर्वरक तथा जैव उर्वरकों के उचित प्रयोग को प्रोत्साहित करना।

4) फसल अवशेषों के रूप में कार्बनिक निरर्थक पदार्थों का प्रयोग करना। इन पदार्थों का उपयोग कम्पोस्ट बनाने, मल्च के रूप में या सीधे मृदा में मिलाकर किया जाता है।

5) पर्यावरण मैत्री टिकाऊ कृषि करना।

6) प्राकृतिक स्रोतों का सही ढंग से प्रयोग करना।

7) पोषक उपयोग क्षमता में वृद्धि करना।

8) मृदा में धनात्मक पोषक सन्तुलन का निर्माण करना।

कृषि में एकीकृत तत्व प्रबन्धन से लाभ

1) अधिकतम पैदावार प्राप्त करना।

2) पोषक तत्वों को बर्बादी से बचाना।

3) मृदा की उत्पादकता एवं स्वास्थ्य बनाये रखना।

4) गुणात्मक उत्पादन।

5) वातावरण की विपरीत परिस्थितियों से बचाव।

6) कीट के प्रभाव को प्राकृतिक तौर पर कम करना।

7) लाभ एवं लागत अनुपात में वृद्धि।

जीवाणु खाद की भूमिका

खेत की एक ग्राम मिट्टी में लगभग दो-तीन अरब सूक्ष्म जीवाणु पाये जाते हैं जिसमें मुख्यतः बैक्टिरिया, फफूँद, कवक, प्रोटोजोआ आदि होते हैं जो मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ाने व फसलोत्पादन की वृद्धि में अनेक कार्य करते हैं (तालिका 1)। जीवाणु फसलों की पौषक तत्वों की जरूरत को पूरा कर उनकी उत्पादन व उत्पादकता बढ़ाते है। सूक्ष्म जीवाणु मिट्टी मे मौजूद फॉस्फोरस को घुलनशील बनाकर पौधो के लिए उपलब्धता बढ़ाते है। सूक्ष्म जीव कुछ मात्रा में सूक्ष्म आवश्यक पौषक तत्वों जैसे जिंक, ताँबा, सल्फर, लोहा, बोरोन, कोबाल्ट व मोलिबिडिनम इत्यादि पौधों को प्रदान करते है। सूक्ष्म जीवाणु खेती में बचे हुए कार्बनिक अपशिष्टों को सड़ाकर मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की उचित मात्रा बनाये रखते है। सूक्ष्म जीवाणु पादप वृद्धि करने वाले हारमोन्स, प्रोटीन, विटामिन एवं अमीनो एसिड़ का उत्पादन करते है। यह सूक्ष्म जीवाणु मिट्टी मे पनप रही रोगजनक फफूँद नष्ट कर लाभकारी जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि करते है। जीवाणुओ के प्रयोग से लगभग 15-30 प्रतिशत फसलोत्पादन बढ़ता है और उत्पाद की गुणवता बहुत अच्छी रहती है। सूक्ष्म जीवाणुओं के प्रयोग से मिट्टी की जलधारण शक्ति व उर्वरा शक्ति बढ़ती है जिससे फसलोत्पादन बढ़ता है। इनके प्रयोग से उपज में लगभग 10-15 प्रतिशत की वृद्धि होती है। इनके प्रयोग से अंकुरण शीघ्र होता है तथा कल्लों की संख्या में वृद्धि होती है। इनके प्रयोग से मिट्टी की भौतिक एवं रासायनिक गुण में सुधार होता हैं। जीवाणु खाद की विभिन्न फसलों में विभिन्न उपचार विधि है (चित्र 2) एवं इनके प्रयोग से अच्छी उपज के अतिरिक्त गन्ने में शर्करा की, मक्का व आलू में स्टार्च तथा तिलहनों में तेल की मात्रा में वृद्धि होती है।

चित्र 2: जीवाणु खाद की उपचार विधि

तालिका 1ः जीवाणु खाद के विभिन्न प्रकार

	जीवाणु खाद		लाभ
1	राइजोबियम	यह एक मिट्टी में पाया जाने वाला बैक्टिरिया है जो दलहनी फसलों की जड़ों पर गुलाबी रंग की गाँठे बनाकर उनमे रहते है तथा वायु मे से नाइट्रोजन लेकर पौधो को उपलब्ध कराते है। इसके द्वारा मिट्टी मे स्थिर की गई नाइट्रोजन की मात्रा जीवाणु का प्रकार, पौधे की किस्म, मिट्टी के गुण, वातावरण एवं शस्य क्रियाओ पर निर्भर करती है। इसके द्वारा मिट्टी मे स्थिर की गई नाइट्रोजन कार्बनिक अवस्था मे होती है, उसका दुष्प्रभाव बहुत कम होता है एवं पौधे अधिक कुशलपूर्वक उसका उपयोग कर पाते है।	50–30 किलो नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर को उपलब्ध कराता है। अवशिष्ट नाइट्रोजन छोड़ता है। 10 –30 प्रतिशत की उपज में वृद्धि। मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखता है।
2	एजोटोबेक्टर	यह जीवाणु खाद बिना दलहन वाली फसलों मे उपयोग की जाती है। यह जमीन मे स्वतंत्र रूप से रहकर हवा की नाइट्रोजन को ग्रहण कर पौधो को उपलब्ध कराता है। मिट्टी मे इनकी संख्या मे बढ़ोतरी मिट्टी मे पाये जाने वाले कार्बनिक कार्बन पर निर्भर करती है।	20–40 किलो नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर को उपलब्ध कराता है। पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देने वाले पदार्थो का उत्पादन करता है जैसे इण्डोल एसिटिक एसिड़, ऑक्सिन्स, जिब्रेलिक एसिड़ तथा विटामिन्स। उपज में 10–15 प्रतिशत की वृद्धि। मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखता है। पदप रोग तथा रोगजनकों का जैविक नियंत्रण।
3	एजोस्पाइरिलम	यह खाद मिट्टी मे पौधो के जड़ क्षेत्र मे स्वतंत्र रूप से रहने वाले सूक्ष्मजीव का एक नम पाउडर उत्पाद है जो वायुमंडल की नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर पौधो को उपलब्ध कराते है । यह जीवाणु खाद धान, मोटे अनाज तथा गन्ने की फसल के लिए लाभकारी है तथा गेहूँ व जौ की फसल के लिए भी उपयोगी है । इसके उपयोग से फसल के उत्पादन मे 10–12 प्रतिशत मे बढ़ोत्तरी होती है तथा 15 से 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन की बचत होती है।	20–40 किलो नाइट्रोजन प्रति हैक्टेयर को उपलब्ध कराता है। खनिज और पानी के अवशोषण में वृद्धि कराता है। जड़ो का विकास करता है। पौधों का विकास और फसल की उपज को बढ़ाता है।
4	फास्फेट घोलक जीवाणु (पी.एस.बी.)	पी.एस.बी. अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील बनाकर पौधो को उपलब्ध कराता है।	इसके उपचार से लगभग 25 से 30 किलो प्रति हेक्टर स्फूर युक्त रासायनिक उर्वरक की बचत हो सकती है तथा इससे विभिन्न फसलों के उत्पादन में 15 से 30 प्रतिशत तक अतिरिक्त उत्पादन भी पाया जा सकता है।
5	नील हरित शैवाल	ये शैवाल पानी से भरे हुआ धान के खेत के लिए विशिष्ट लाभकारी होते है। ये फसल की 10–15 प्रतिशत उपज मे बढ़ोत्तरी करते है।	

निष्कर्षः

जीवाणु खाद एक प्रकार की प्राकृतिक खाद है। यह खाद सूक्ष्म जीवाणुओं से बनती है जो फसल एवं पर्यावरण के मित्र होते हैं साथ ही फसल की ऊपज एवं मृदा की उर्वरा शक्ति को भी बढ़ाते है। अतः एकीकृत पोषक प्रबन्धन में जीवाणु खाद का बहुत महत्त्व है। कार्बनिक, अकार्बनिक और जैविक स्रोतों के समन्वित उपयोग से फसल उत्पादन में भी बढ़ोत्तरी होगी और पर्यावरण स्वच्छ रहेगा।

जल संरक्षित खेती वर्तमान कृषि की आवश्यकता

संदीप उपाध्याय

शिक्षण सह शोध सहायक, मृदा विज्ञान विभाग, रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी, (उ. प्र.) 284003

ई-मेलः sandeeprlbcau@gmail.com

सारांशः

जल और भूमि कृषि की दो प्रमुख संसाधन हैं इनके संरक्षण की जरूरत है। बुंदेलखण्ड में मिट्टी उपयुक्त गहरी न होने से ऊबड़ खाबड़ पथरीली होने से जल संसाधनों की कमी है। कम और असामयिक वर्षा भूमि बुंदेलखण्ड की कृषि को बहुत कठिन बना रहा है। बुंदेलखण्ड में जून 2023 में वर्षा में 41 प्रतिशत की कमी हुई है किसान कड़ी मेहनत और निवेश के कारण फसलें की कम उपज से परेशान है। इसका कारण जानने के लिये विश्व मौसम विज्ञान संगठन (डब्ल्यू. एम. ओ.) ने पूर्वानुमान लगाया था कि वर्ष 2024 वर्ष 2023 से भी अधिक गर्म हो सकता है जो रिकॉर्ड देखने पर पता चला कि 2023 भी अन्य वर्षों में से सबसे गर्म वर्ष है। अल नीनो के परिणामस्वरूप कुछ क्षेत्रों में लू सूखा जंगल की आग भारी बारिश और बाढ़ जैसी चरम घटनाएं बढ़ गयी हैं। टिकाऊ कृषि जल संरक्षण प्रबंधन तरीके अपनाने से ही होगी। किसान खेत के ढाल का समतलीकरण कर मजबूत मेड से भू-क्षरण रोकें। अधिक से अधिक मृदा अच्छादन करें सिंचाई का सही तरीका अपनायें। सूक्ष्म सिंचाई अथवा ड्रिप सिंचाई प्रयोग करें। संस्तुति अनुसार फसलों की उष्ण जलवायु सहनशील शुष्क प्रभेदों की बुवाई करें। कृषि वैज्ञानिक व किसानों के बीच का संवाद का अंतर नहीं हो अतः व्हाट्सअप समूह उनके साथ समय-समय से अखबारों और रेडियों में एडवायजरीज व प्रशिक्षण कार्यशालाएं जो भी आयोजित हो रही हैं। गाँव गाँव में निरंतर अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन हो रहे हैं अति महत्वपूर्ण हैं जुड़े रहें।

पृथ्वी के बारे में हम विचार करें सौरमण्डल के उपग्रहों में पृथ्वी पर ही पानी है सतह पर 71 प्रतिशत भाग पानी से ढ़का है लेकिन ताजा शुद्ध जल कुल जल का 3 प्रतिशत ही है। पृथ्वी पर 97 प्रतिशत पानी महासागरों में है जो कि खारा है। 3 प्रतिशत ताजे जल का 2 प्रतिशत बर्फ की टोपी और ग्लेशियरों के रूप में जमी हुयी अवस्था है, अर्थात् हम अपनी दैनिक जरूरतों के लिये केवल 1 प्रतिशत पानी का ही उपयोग कर सकते हैं जोकि जलाशय, तालाब, झरने और नदियों आदि में पाया जाता है। कृषि क्षेत्र में इन जल संसाधन का अभी 83 प्रतिशत उपयोग हो रहा है लेकिन अन्य क्षेत्रों में बढ़ती माँग के आधार पर वर्ष 2050 तक कृषि उपयोग के लिये इसकी उपलब्धता घटकर 68 प्रतिशत तक हो जाने का अनुमान है। वाटर एड इंडिया की स्टेट आफ इंडियाज वाटर 2019 रिपोर्ट के मुताबिक, 1 किलो गेहूँ के उत्पादन में करीब 1654 लीटर पानी लगता है इसी तरह एक किलो चावल के उत्पादन में 2800 लीटर पानी लगता है।

बुंदेलखण्ड में जल संसाधनों की कमी है। कम और असामयिक वर्षा मिट्टी का उपयुक्त गहरा न होना, ऊबड़ खाबड़

चित्रः विश्व मृदा दिवस 2023 में भूमि और जल संसाधन का महत्व दर्शाता पुरस्कृत पोस्टर

चित्रः किसान मित्र केंचुआ से बना उर्वर मृदा स्वास्थ्य

चित्रः गंभीर जलजमाव से बनी लवणताग्रस्त मृदा समस्या

चित्रः मेड़ बनाकर सिंचाई प्रयोग करें।

चित्रः मक्का में मेड़ बनाकर सहारा दें और फसल की सिंचाई करें।

चित्रः पानी के व्यर्थ नुकसान के लिये सतही सिंचाई से बचें।

चित्रः ड्रिप सिंचाई से कम पानी में खेती करें।

चित्रः बहुपयोगी यंत्र जीरो टिल-फर्टी ड्रिलसे लाईन में बिजाई करें खाद लगायें और नमी संरक्षण रखें।

चित्रः मल्च पलवार लगाकर वृक्षों के मध्य कन्दवर्गीय फसल उगायें।

चित्रः विश्वविद्यालय के शोध-प्रक्षेत्र में नमी संरक्षण का लगा हुआ परीक्षण।

चित्रः विश्वविद्यालय में शोध प्रक्षेत्र का अवलोकन-निरीक्षण करते वरिष्ठ अधिकारीगण।

पथरीली पठार भूमि भी है। बुंदेलखण्ड की खेती पूरी तरह से वर्षा पर आधारित है। बुंदेलखण्ड में जून 2023 में वर्षा में 41 प्रतिशत की कमी हुई है और नवंबर माह की फसल भी अपर्याप्त वर्षा होने और मौसम की अनियमितता से देरी से बोयी गयी। कुल मिलाकर इसे मौसम वैज्ञानिक अल-नीनो मौसम प्रभाव तो कह रहे हैं किन्तु किसान कड़ी मेहनत और निवेश के कारण फसलें की कम उपज से परेशान है। इसका कारण जानने के लिये विश्व मौसम विज्ञान संगठन (डब्ल्यू. एम. ओ.) ने पूर्वानुमान लगाया कि वर्ष 2024 वर्ष 2023 से भी अधिक गर्म हो सकता है, जो रिक र्ड देखने पर पता चला कि 2023 भी अन्य वर्षों में से सबसे गर्म वर्ष है। यही अल नीनो मौसम प्रभाव है जिसके परिणामस्वरूप, कुछ क्षेत्रों में लू, सूखा, जंगल की आग, भारी बारिश और बाढ़ जैसी चरम घटनाएं बढ़ेंगी, जिनके बड़े प्रभाव होंगे और दिख भी रहे हैं।

कृषि के विकास में आने वाली समस्याओं में मुख्य समस्या जल आपूर्ती की अनिश्चितता है जिससे किसानों की फसल उत्पादकता में कमी लगातार बढ़ रही है। यहाँ इस क्षेत्र में कृषि टिकाऊ कृषि प्रारंभ करने से साथ भौगोलिक स्थिति अनुसार संरक्षण प्रबंधन तरीके अपनाने आवश्यक ही नहीं, अनिवार्यत/लागू भी करने हैं जिनमें ढाल का समतलीकरण कराना और मेड़बंदी प्रमुख है। अतः आप भी अपनी भूमि का समतलीकरण करें तत्पश्चात् खेत के चारों ओर मजबूत मेड़ बना लें जाये ताकि भू-क्षरण रुके। मेड़ों के फलस्वरूप भूमि के अन्दर अधिक से अधिक वर्षा का जल में चला जाये और नमी का उपयोग पौधों के द्वारा गर्मी में किया जा सके। मृदा अच्छादन करें, सिंचाई का सही तरीका अपनायें। सतही सिंचाई से बचें, जिसमें अधिक पानी लग रहा है। सूक्ष्म सिंचाई अथवा ड्रिप सिंचाई प्रयोग करें। मिट्टी पर उचित आच्छादन होने से उसके जीवांश पदार्थ में कमी नहीं आएगी वह तेज धूप की गर्मी से ऑक्सीकृत नहीं होगा, उस जीवांश पदार्थ का ह्रास नहीं होगा। क्योंकि बुंदेलखंड की मिट्टियों में जीवांश पदार्थ की मात्रा सामान्य से कम है। इस जीवांश पदार्थ से कार्बनिक स्तर तभी बढ़ाया जा सकता है जब जल संरक्षण पर समुचित ध्यान देंगे। अधिकाधिक वृक्षारोपण किया जायेगा कृषि में वानिकी का सहारे खेती करनी होगी। केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय के शोधप्रखण्ड में मल्च-पलवार लगाकर वृक्षों के मध्य अदरक की उगायी फसल दोगुना उपज दे रही है। वैज्ञानिक आकलनों के अनुसार एक टन पराली-घास जलने से 6 किलो नत्रजन, 2 किलो फॉस्फोरस, 15 किलो पोटाश, 2 किलो सल्फर और बहुत सा जैविक-ह्यूमस एक बार में ही नष्ट हो जाता है। वनाग्नि हो या पराली का जलाना किसी तरह से भूमि के ऊपर आग नहीं लगने देनी है।

किसान भाईयों विभिन्न स्थानों पर विभिन्न प्रकार की बुंदेलखंड की मिट्टियों में तापमान और नमी की लगातार निगरानी की गई है और यह पाया गया है कि चली आ रही दलहनी और तिलहनी फसलें बेहतर हैं श्री अन्न वर्ग मिलेट्स की फसलें जिन्हें कम खाद और कम पानी चाहिए और अधिक उपयुक्त हो सकती हैं। बुंदेलखंड की राकरमिट्टी, कम जल धारण क्षमता व कम जीवांश वाली तथा मार मिट्टी, अधिक जलधारण क्षमता व अधिक जीवांश वाली है। परवा मिट्टी में कम सिंचाई पानी वाली ज्वार, उड़द, मूंग, मूंगफली व तिल जैसी फसलें अच्छी होती हैं, जबकिराकर मिट्टी में गेहूँ, अलसी व मार मिट्टी में अधिक पानी वाली गेहूँ, चना, दलहनी, तिलहनी फसलें अच्छी हो जाती हैं। श्री अन्न मिलेट्स वर्ग के लिये परवा और राकर दोनों ही मिट्टियाँ उपयुक्त हैं।

किसान भाईयों आपको यह भी समझना है कि अधिक जल संसाधन होने और अधिक सिंचाई देने से भी फसल की उत्पादकता

भूमि की उर्वरता अच्छी होगी यह सत्य नहीं है, फसल उत्पादकता और गुणवत्ता अपितु कम ही हो जाती है। इस संबंध में मृदा वैज्ञानिकों के शोध अनुभवों से सिंचाई की शुरूआत और जल जमाव और मिट्टी की लवणता के प्रसार के बीच एक अंतर संबंध का भी पता चला है। हाल यह है कि स्वतंत्रता के बाद की अवधि में शुरू की गई परियोजनाओं में भी गंभीर जल जमाव और मिट्टी की लवणता की समस्याएँ विकसित हो गई है। बहुत सी जल सिंचाई परियोजना में जल जमाव लवणता इतनी तेजी से हुआ है कि देश भर के किसान और पर्यावरणविद् जागरूक जनता ने मिट्टी बचाओं आन्दोलन प्रारम्भ किया हुआ है।

बुंदेलखंड की कृषि में जलमग्न धान की बुवाई से भी बचना होगा। धान की सीधी बुवाई एरोबिक राइस में 20 प्रतिशत जल एवं श्रम की बचत होती है शुष्क क्षेत्र के लिए चयनित प्रभेदों और किस्मों को ही बुवाई में प्रयोग करना होगा। खरीफ के मक्के की उत्पादकता बढ़ने की संभावनाएं और अधिक हैं। खरीफ मक्का अधिक जल की प्रति अतिसंवेदी है यह भी मेड़ में उगाना होगा। मिश्रित खेती में अनाज फसलों में दलहनी फसलों को मुख्यतः उगाना है जैसे गेहूँ जौ के साथ चना-मटर-मसूर। अनाज के साथ तिलहन जैसे गेहूँ संग सरसों को प्राथमिकता न दें या कम दें कारण यह है कि यह दोनों फसलें एक साथ भूमि की अधिक सिंचाई और रसायन खाद मांग बढाती हैं। गेहूँ के साथ चना बुंदेलखंड की भूमि के लिए सर्वथा उपयुक्त है। गेहूँ के साथ चना को कूँड-नाली विधि अर्थात मेड-खांच विधि से बोना है। गेहूँ की 4 पंक्तियाँ कतार नाली की खाँच में और 2 पंक्तियाँ मेड़ पर उभार के दोनों ओर ऊपर बोनी हैं जिससे सिंचाई का जल गहरी खाँचों में गेहूँ को मिलता रहेगा चने पर अतिरिक्त पानी से नुकसान नहीं होगा और इससे अंतर सस्यन क्रियाओं जैसे खरपतवार नियंत्रण में भी सुविधा होगी। इस मिश्रित खेती में बहुत लाभ हैं जैसे कि खेती की इस पद्धति से भूमि की विभिन्न सतहों से पोषक तत्वों का समुचित उपयोग होता है भूमि संरचना में सुधार होता है भूमि कटाव रुकता है प्रति इकाई क्षेत्रफल में उपज में वृद्धि होती है एक फसल के कम उत्पादन पर दूसरी फसल तो कुछ न कुछ उत्पादन देती ही है प्रयोगों और परीक्षणों से यह भी ज्ञात हुआ है कि जहाँ एकल फसल बुवाई में भूमि कि उर्वरा शक्ति क्षीण होती जाती है जो इस मिश्रित खेती में नहीं होती गेहूँ की 30 से 40 प्रतिशत नत्रजन आवश्यकता चना की दलहन फसल पूरी कर देती है आगे आने वाली फसल को भी लाभ मिलता है।

ऐसी भूमि जो कि नयी हो अथवा जिसमें उपज निरंतर घट रही हो पानी की भी कमी हो प्रारंभिक हल्की सिंचाई के साथ मसूर की खेती प्रारम्भ करना लाभप्रद होता है। इसकी महीन जड़ों की बहुत छोटी-छोटी गाँठों में नाईट्रोजन बंधक सहजीवी जीवाणु पाये जाते हैं जो कि भूमि में नाईट्रोजन बढा देती है सूक्ष्म जड़ों से कार्बनिक जीवांश भी बढ़ जाता है फलस्वरूप जलधारण क्षमता भी बढ जाती है। वैज्ञानिक तौर पर मसूर या अन्य इस वर्ग की दलहनों की खेती में नाईट्रोजन की रासायनिक खाद नहीं देते, राईजोबियम का कल्चर लगाना सही है लेकिन दलहनों फसल के आरंभिक विकास के समय कुछ सप्ताह में कमजोर और हल्की रेतीली मृदा में नाईट्रोजन की रासायनिक खाद की कम मात्रा जैसे 15 से 20 किग्रा. प्रति हैक्टेयर बेसल ड्रिलिंग द्धारा अनुप्रयोग किया जाना चाहिये।

भूमि तथा जल बचाकर उन्नत खेती करने के लिये बहुत से संकल्पना परिक्षण परिणाम विश्वविद्यालय के शोध कार्यों से परखे गये हैं परखे जा रहे हैं, रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय सदैव बुंदेलखण्ड के सभी किसानों के साथ है। कुलपति डॉ. ए.के. सिंह और के मार्गदर्शन तथा निदेशक प्रसार शिक्षा डॉ. एस.एस. सिंह के निर्देशन में विभिन्न वैज्ञानिक गण विभिन्न प्रकार की अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन किसानों के गाँव-गाँव में लगाकर निरंतर देख रेख में पूरी कर रहे हैं कि अच्छे बीज, खाद व कृषि विधि का ज्ञान किसानों को पहुँचे वह शिक्षित हो पाये उसके प्रशिक्षण हेतु विभिन्न कार्यशालाएं आयोजित हो रही हैं। निदेशक शिक्षा डॉ. अनिल कुमार और निदेशक शोध डॉ. एस के चतुर्वेदी आपके लिए ही छात्रों को अध्ययन अध्यापन के साथ उच्च स्तरीय शोधकार्य करवा रहे हैं। कृषि वैज्ञानिक व किसानों के बीच का अंतर कम करने के लिये व्हाट्सअप समूह और समय-समय से अखबारों और रेडियो में एडवायजरीज जारी करी जा रही हैं। आपसे आग्रह है जुड़े रहें।

निष्कर्ष

टिकाऊ कृषि और जल संरक्षण प्रबंधन तरीके अपनाने से ही बुंदेलखण्ड की कृषि का संरक्षण सम्भव है अन्यथा कुदरती आफतों के सामने कृषि स्वरूप बिगड़ता जायेगा नितांत आवश्यकता है कि सबके स्वस्थ स्वास्थ्य के लिये बुंदेलखण्ड के किसानों को भी प्राकृतिक संसाधनों के महत्व अनुसार खेती अपनानी चाहिये।

सतत मृदा स्वास्थ्य में मृदा संशोधन की महत्वपूर्ण भूमिका

थौनौजम थॉमस मीतेई[1] एवं यूमनाम बीजीलक्ष्मी देवी[2]

[1]कृषि महाविद्यालय, [2]उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी (उ. प्र.)

ई-मेलः thounaojamtmeetei@gmail.com

सारांश

जलवायु परिवर्तन एवं जनसंख्या वृद्धि के बढ़ते दबाव के कारण, मानव अस्तित्व की स्थिरता पर एक सवाल हैं क्योंकि इन कारणों से मिट्टी की अवनति को बढावा मिलता हैं एवं फसल उत्पादकता कम होता है। इस बरती जनसंख्या को खाद्य सुरक्षित रखना एक चुनौती है, जिसके कुछ कारण हैं, अनियमित बारिश के प्रतिरूप, तापमान में उतार चढ़ाव, बदलती जलवायु की परिस्थिति आदि। पारंपरिक कृषि पद्धतियों को अपनाना जैसे जीव सम्बन्धित हेरफेर, अत्यधिक उर्वरक का उपयोग और रासायनिक इनपुट का निरंतर उपयोग मिट्टी के स्वास्थ्य में गिरावट लाता है। इन परिणामों से बचने के लिए मिट्टी का स्थल विशिष्ट प्रबंधन रणनीतियों का पालन करना तत्कालीन आवश्यकता है जिससे मृदा स्थायी रूप से सुरक्षित रहेगा। स्थल विशिष्ट प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण पहलू है, मृदा संशोधन, जो मिट्टी के स्वास्थ्य को अनुरक्षित करता है। मृदा संशोधन कोई भी पदार्थ है जिसका उद्देश्य मिट्टी की रासायनिक या भौतिक विशेषताओं को बहुतर करना है। मृदा संशोधन के रूप में कार्बनिक और अकार्बनिक सामग्रियों को शामिल करके खराब मिट्टी को बेहतर बनाया जा सकता हैं। इन सामग्रियों से जैव विविधता में वृद्धि होती है और पोषक तत्व एकाग्रता को बढ़ावा मिलता है जिससे मिट्टी स्वस्थ रहता है। मिट्टी में पर्यावरण सुरक्षित संशोधनों का उपयोग करके भावी पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण कर सकते है। इस माध्यम से किसानों की आजीविका और फसल उत्पादकता को भी सुनिश्चित कर सक सकते है। मृदा संशोधन एक ऐसी सामग्रियां हैं जिनमें आवश्यक पोषक तत्व होते हैं जो मिट्टी के कई गुण जैसे भौतिक, रासायनिक और जैविक को बढ़ाते हैं। मृदा संशोधन की कई महत्वपूर्ण भूमिकाएँ है जो न सिर्फ मिट्टी की गुणवत्ता बढ़ाता है, बल्कि कार्बन पृथक्करण में भी अपनी भूमिका निभाता है।

परिचय

मृदा संशोधन एक विशेष सामग्रियाँ हैं जिनमें आवश्यक पोषक तत्व होते हैं जो मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को बढ़ाने में मदद करते हैं। वे मिट्टी को पौधों के विकास के लिए एक आदर्श वातावरण में बदलने में मदद करते हैं। यह सामग्रियाँ या तो प्राकृतिक रूप से पाई जा सकती हैं, जैसे कि पौधे और जीवाणु, या कृत्रिम रूप से उत्पादित, जिनमें पॉलिमर और औद्योगिक कूड़ा उत्पाद शामिल हैं। मिट्टी में संशोधन का महत्व उनकी बहुआयामी भूमिकावों में निहित है जैसे की अम्लीय या क्षारीय मिट्टी में पीएच को नियंत्रित करना, मृदा समग्र स्थिरता में सुधार, माइक्रोबियल जैव विविधता में सुधार आदि।

जल प्रतिधारण और पारगम्यता के संदर्भ में, मृदा संसोधन का उपयोग, मृदा संरचना, वायु संचारण जैसे मिट्टी की विशेषताओं को बढ़ावा देते हैं। मृदा संशोधन एक अनुकूल मृदा वातावरण को बनाता है जो लाभकारी सूक्ष्मजीवों और केंचुओं को आकर्षित करता है जिससे मृदा स्वास्थ्य सुरक्षित रेहता है। इसके अलावा, वे खराब हो चुकी मिट्टी को पुनर्जीवित करने और अनुचित प्रबंधन प्रथाओं के कारण खराब हुई मिट्टी को पुर्नस्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। आवश्यक पोषक तत्वों को शामिल करके, वे मिट्टी को समृद्ध करते हैं, स्वस्थ और अधिक उत्पादक पौधों के विकास को बढ़ावा देते हैं। इसके अतिरिक्त, मिट्टी में संशोधन मिट्टी के दबाव और कठोर परतों के निर्माण को कम करता है एवं मिट्टी को इष्टतम स्वास्थ्य और कार्यक्षमता की स्थिति में बनाए रखने में मदद करता है। कुल मिलाकर, यह सामग्रियाँ टिकाऊ कृषि के लिए परम आवश्यक बन जाती है और मिट्टी के सहयोगी के रूप में कार्य करके पौधों के जीवन की जीवन शक्ति का समर्थन करती हैं।

मृदा संशोधन के प्रकार

मृदा संशोधन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है मृदा सुधार, भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों की उन्नति जैसे कार्यो में। इनको कोई भी संसाधनों के साथ मिलाकर खाद्य के रूप में दे सकते है। मृदा संशोधन मूल रूप से दो प्रकार के होते है, अकार्बनिक और जैविक जिसमें जिप्सम, पाइराइट, चूना जैसे खनिज और पशु खाद, खाद और वर्मीकम्पोस्ट जैसे कार्बनिक पदार्थ शामिल हैं। अक्सर कृषि, वानिकी और शहरी स्रोतों से प्राप्त कार्बनिक संशोधन, माइक्रोबियल गतिविधि को उत्तेजित करते हैं। कार्बनिक पदार्थ एसिड की रिहाई मिट्टी में करते हैं जो पोषक तत्वों की उपलब्धता में सुधार लाता हैं। पशु खाद्य कृषि में एक सामान्य स्रोत है, जो सूक्ष्म जीव गतिविधि और पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ावा देता है।

जैविक संशोधन में बायोचार, फसल अवशेष, वन उत्पत्ति सामग्री और औद्योगिक कूड़ा का योगदान है एवं खनन या मानव निर्मित अकार्बोनिक संसाधनों में आम मिट्टी कंडीशनर के रूप में चूना और जिप्सम शामिल हैं। खनिज पदार्थ जैसे सल्फर, पर्लाइट, बेंटोनाइट क्ले, एप्सम नमक और सोडियम क्लोराइड, मिट्टी के पीएच को नियंत्रित करते हैं और मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को बहतर बनाते है। जैविक एवं अकार्बनिक संशोधन मिट्टी के स्वास्थ्य को सुधारने में महत्वपूर्ण योगदान देते है।

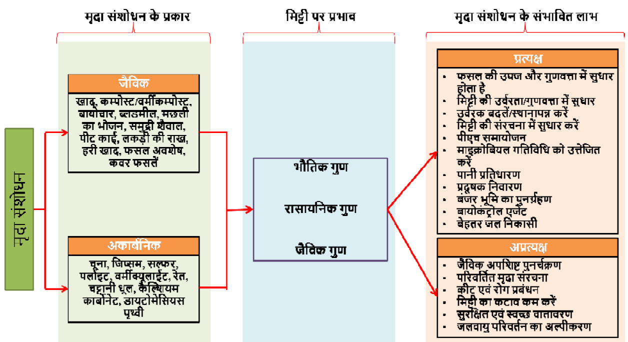

चित्रः मृदा संशोधन के प्रकार एवं इससे प्रभावित मृदा गुण

मृदा संशोधन से प्रभावित मृदा गुण

मृदा संशोधन पौधों की वृद्धि के लिए अनुकूलतम परिस्थितियाँ बनाने और मृदा स्वास्थ्य को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मृदा संशोधन, जड़ विकास और पोषक तत्वों के समावेश के लिए ढीली और अनुकूल मिट्टी सुनिश्चित करते हैं और मिट्टी के दबाव को कम करते हैं। इसके अतिरिक्त, मिट्टी में संशोधन, जल प्रतिधारण को बढ़ाता है, जो सूखे समय के दौरान महत्वपूर्ण है, और इष्टतम पोषक तत्वों की उपलब्धता के लिए मिट्टी के पीएच को संतुलित करता है।

मृदा संशोधन आवश्यक पोषक तत्वों की रिहाई को सुविधाजनक बनाती है और लीचिंग को रोकने में मदद करता हैं। इसके अलावा, लाभकारी सूक्ष्मजीवों को प्रोत्साहित करता हैं, पोषक तत्वों के चक्रण में सहायता करता है और जैविक गतिविधि को बढ़ाकर समग्र मिट्टी के स्वास्थ्य को सुधारता है। उन्नत मिट्टी की संरचना, परिदृश्य और उर्वरता के संरक्षण से मृदा कटाव का अल्पीकरण किया जा सकता है। मृदा संशोधन का उपयोग रासायनिक उपचारों पर निर्भरता को कम करता है जिससे टिकाऊ कृषि में लाभ मिलता है।

सघन कृषि के संदर्भ में, मृदा संशोधन के प्रभाव महत्वपूर्ण हैं, कृषि अपशिष्टों का उपयोग टिकाऊ मृदा कंडीशनिंग के लिए मूल्यवान स्रोतों के रूप में किया जाता है। वे मिट्टी के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक विशेषताओं को प्रभावित करते है जिससे मिट्टी की गुणवत्ता, पोषक चक्र और समग्र कृषि उत्पादकता को बढ़ावा मिलता हैं। विशेष रूप से, पीएच नियंत्रण और पोषक तत्वों की उपलब्धता पर मिट्टी के संशोधनों का गहरा प्रभाव पड़ता है। मृदा संशोधन, पौधों के विकास के लिए एक स्वस्थ और टिकाऊ वातावरण को बनाने और बनाए रखने में उनकी अनिवार्य भूमिका को सुनिश्चित करता है।

मृदा संशोधन और कार्बन खेती

कार्बन खेती से तात्पर्य विशिष्ट खेत में प्रथाओं को जानबूझकर अपनाने से है जिसका उद्देश्य वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड निकालना एवं इसे मिट्टी और पौधों की सामग्री के भीतर संग्रहीत करना है। यह दृष्टिकोण ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन के प्रभावों को कम करके जलवायु परिवर्तन को संबोधित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कार्बन खेती प्रथाओं में विभिन्न प्रकार की तकनीकें शामिल हैं, जिनमें मिट्टी में संशोधन जैसे कि खाद या बायोचार, संरक्षण जुताई, कृषि वानिकी और जीवित जड़ों को अधिकतम करने पर जोर देने के साथ आवरण फसलों का उपयोग शामिल है। प्राथमिक उद्देश्य फसल भूमि और रेंजलैंड पर मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ को बढ़ाना है, जिससे मिट्टी में कार्बन का समावेश हो सके। यह प्रक्रिया न केवल वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर को कम करके जलवायु परिवर्तन से निपटने में मदद करती है, बल्कि मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ाना और बढ़ी हुई अनुकूली क्षमता के लिए संभावित लाभ भी प्रदान करती है। मृदा संशोधन जैसे खाद या बायोचार, कार्बनिक पदार्थ कार्बन को संग्रहीत करके कार्बन पृथक्करण प्रक्रिया को बढ़ाता है। किसान, इन पद्धतियों को अपनाकर टिकाऊ कृषि में योगदान करते हैं और जलवायु लचीलेपन का समर्थन करते हैं, जिसके चलते स्वस्थ मिट्टी को नियंत्रित रखते है। इसके फलस्वरूप, जलवायु परिवर्तन से निपटने के वैश्विक प्रयासों में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं।

निष्कर्षः

जलवायु परिवर्तन और जनसंख्या वृद्धि के कारण बढ़ रही मृदा के विनाश को संबोधित करने के लिए तत्काल कार्रवाई की आवश्यकता है। पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ, साइट विशिष्ट रणनीतियों की आवश्यकता को दर्शाता है। जैविक और अकार्बनिक संशोधनों को शामिल करने से मिट्टी के विनाश की रोक एवं मिट्टी के गुणों का सुधार संभव है। आवश्यक पोषक तत्वों से भरपूर ये संशोधन, रसायनों पर निर्भरता को कम करके, दीर्घकालिक मिट्टी की स्वास्थ्य को बढ़ावा देकर और कृषि उत्पादकता का समर्थन करके, सतत कृषि में योगदान करते हैं। जैसे-जैसे कृषि विक्षित होती है, एक स्वस्थ, टिकाऊ वातावरण बनाने के लिए विविध संशोधनों का समावेश अनिवार्य हो जाता है। कार्बन खेती की अवधारणा जलवायु

परिवर्तन से निपटने और मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ावा देने में खाद या बायोचार जैसे संशोधन की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करती है। अंततः, हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है मृदा संशोधन की कई महत्वपूर्ण भूमिकाएँ है जो न सिर्फ मिट्टी की गुणवत्ता बढ़ाता है, बल्कि कार्बन पृथक्करण में भी अपनी भूमिका निभाता है।

जहरीले रसायनों के बढ़ते प्रचलन में नियंत्रण आवश्यक

गुंजन गुलेरिया, अनुसुइया पांडा, योएगश्वर सिंह, शिव वेन्द्र सिंह, गरिमा, वनपला आलेख्या, प्रवीण एच, पुसूलरी पवन एवं अंकुश राज

ई-मेलः gunjan-guleria915@gmail.com

सारांश

कीटनाशकों में कीटनाशक, शाकनाशी, कृतकनाशक आदि जैसे विभिन्न यौगिक शामिल होते हैं। भारत में 1990 के बाद से कीटनाशकों के उपयोग में कमी देखी गई है, लेकिन इसका उच्च उपयोग अभी भी समाज पर नकारात्मक प्रभाव डालता है, जिससे कीटनाशक विषाक्तता और बीमारियाँ होती हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन और संयुक्त राष्ट्र का अनुमान है कि वैश्विक स्तर पर हर साल मानव कीटनाशक विषाक्तता के लगभग 1 मिलियन मामले होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप 20,000 मौतें होती हैं। हालाँकि विकासशील देश दुनिया भर में केवल 20% कीटनाशकों का उपयोग करते हैं, लेकिन अपर्याप्त सुरक्षा उपायों, मानकों के प्रवर्तन और कीटनाशकों के खतरों के बारे में जानकारी के कारण वे कीटनाशकों से होने वाली अधिकांश मौतों का अनुभव करते हैं। जोखिमों को कम करने के लिए, सुरक्षात्मक कपड़े पहनना, विषाक्तता जागरूकता के लिए लेबल पढ़ना और रसायनों का उचित तरीके से निपटान करने जैसी सुरक्षा सावधानियों का पालन करना आवश्यक है। यदि कीटनाशक का संपर्क होता है, तो तुरंत चिकित्सा सहायता लें और रासायनिक कंटेनरों का निपटान एक निर्दिष्ट क्षेत्र में करें, न कि खाई या तालाबों में।

परिचय

कीटनाशक शब्द में कीटनाशकों, कवकनाशकों, शाकनाशी, कृंतकनाशकों, मोलस्काइड्स, नेमाटीसाइड्स, पौधों के विकास नियामकों और अन्य सहित यौगिकों की एक विस्तृत श्रृंखला शामिल है। विश्व स्तर पर आधे से अधिक कीटनाशकों का उपयोग एशिया में किया जाता है। भारत विश्व स्तर पर कीटनाशकों के उपयोग में 12वें स्थान पर और एशिया में चीन और तुर्की के बाद तीसरे स्थान पर है। वर्तमान अध्ययन में, भारत और दुनिया के विभिन्न प्रकार के कीटनाशकों, कीटनाशकों के उपयोग के पैटर्न और विस्तृत कीटनाशक खपत के आंकड़ों को एकत्र, व्यवस्थित और सारांशित किया गया। कुल जनसंख्या का लगभग 70% कृषि क्षेत्र के अंतर्गत कार्यरत है जो भारतीय अर्थव्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र है। और कीटनाशक और उर्वरक आधुनिक कृषि का प्रमुख अभिन्न अंग हैं। वैश्विक कीटनाशक उपयोग में भारत की हिस्सेदारी केवल 1% है। आदर्श रूप से एक कीटनाशक लक्षित कीटों के लिए घातक होना चाहिए, लेकिन मनुष्य सहित गैर-लक्षित प्रजातियों के लिए नहीं। दुर्भाग्य से, यह मामला नहीं है, इसलिए कीटनाशकों के उपयोग और दुरुपयोग का विवाद सामने आया है। ''अगर थोड़ा अच्छा है, तो बहुत कुछ बेहतर होगा'' कहावत के तहत, इन रसायनों के बड़े पैमाने पर उपयोग ने मानव और अन्य जीवन रूपों के साथ खिलवाड़ किया है। यह स्पष्ट है कि भारत प्रति हेक्टेयर फसल भूमि क्षेत्र में कम मात्रा में कीटनाशकों का उपयोग करता है, लेकिन अनियंत्रित और बेतरतीब कीटनाशकों का उपयोग प्राकृतिक और भौतिक दोनों वातावरणों में उच्च कीटनाशक अवशेषों की उपस्थिति के लिए जिम्मेदार है। भारत में कीटनाशकों का मुख्य उपयोग कपास की फसल (45%) के लिए होता है, इसके बाद धान और गेहूँ का स्थान आता है। कीटनाशकों से दुनिया की 64% जमीन को खतरा है। सात दशकों में कीटनाशकों की खपत 45 गुना अधिक हो गयी है। मनुषय की सेहत और पर्यवान को नुकसान पहुँचा रहे हैं। अनाज व सब्जियों की उपज में भी कीटनाशकों की मात्रा पाई जाने लगी है जिसे खाने से लोगों में कई तरह की बीमारियाँ फैल रही हैं। वैश्विक स्तर पर खेतों में लगभग 30 लाख टन कीटनाशकों का उपयोग किया जाता है। इनका एक बड़ा प्रतिशत जमीन में रिस कर पहुँचता है जो धरती को नुकसान पहुँचाने के साथ हमारे स्वास्थ्य को भी हानि पहुँचाता है।

भारत में कीट नाशकों का उपयोग

भारत में कीटनाशकों की प्रति हेक्टेयर खपत दुनिया में सबसे कम है और यह 1 किलो/हेक्टेयर है, जबकि यू के में 5-7 किलो/हेक्टेयर और चीन में 13 किलो/हेक्टेयर है। भारत में, कुल खेती योग्य क्षेत्र का लगभग 40% कीटनाशकों से उपचारित किया जाता है, और कीटनाशकों से उपचारित खेती योग्य क्षेत्र का लगभग 65-70% सिंचित होता है। औसतन, भारत में रेशे वाली फसलों के लिए 65% क्षेत्र को कीटनाशकों से उपचारित किया जाता है, इसके बाद फलों (50%), सब्जियों (46%), मसालों (43%), तिलहनों (28%), और दालों (23%) का उपचार किया जाता है। भारत में शाकनाशी 10%, कीटनाशक 76%, कवकनाशक 13% उपयोग हो रहा है और विश्व में शाकनाशी 30%, कीटनाशक 44%, कवकनाशक 21% (चित्र 1)। ब्राजील 2021 में दुनिया में कीटनाशकों का सबसे बड़ा उपयोगकर्ता था। यह संयुक्त राज्य अमेरिका के करीब था, जो दूसरा सबसे बड़ा

उपयोगकर्ता था। अगले तीन उपयोगकर्ताओं - इंडोनेशिया, चीन, अर्जेंटीना - सभी के एप्लिकेशन स्तर समान थे। विभिन्न देशों में भारत भी एक ऐसा देश है जहाँ 1990 से 2021 तक कीटनाशकों का उपयोग कम हो गया है लेकिन अभी भी भारत में कीटनाशकों का उपयोग बहुत अधिक है जो भारतीय समुदाय को प्रभावित कर रहा है। 1990 से 2021 तक कीटनाशकों का उपयोग कम करने वाले देशों के कुछ उदाहरण भारत (-18%), स्वीडन (-20%), स्विट्जरलैंड (-1%) आदि हैं। 2021 तक जिनका कीटनाशकों का उपयोग बढ़ा है उनमें ब्राजील + (1,307%), चीन + (62%), अमेरिका + (191%), यूरोप + (1%), बांग्लादेश + (1,125%), ऑस्ट्रेलिया + 255%, श्रीलंका + (157%) हैं।

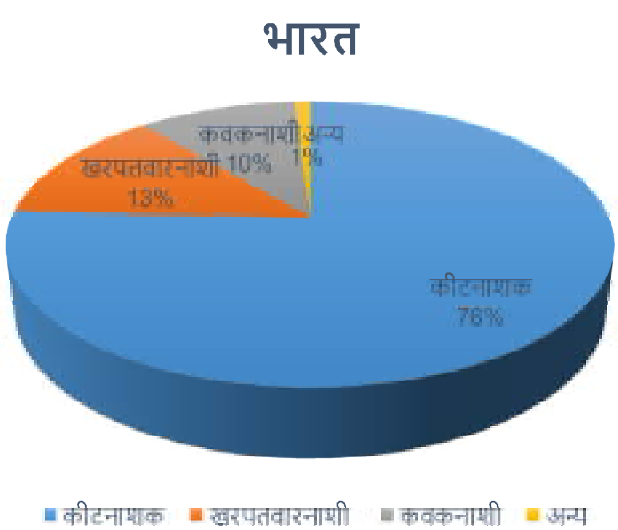

चित्र 1 (क)

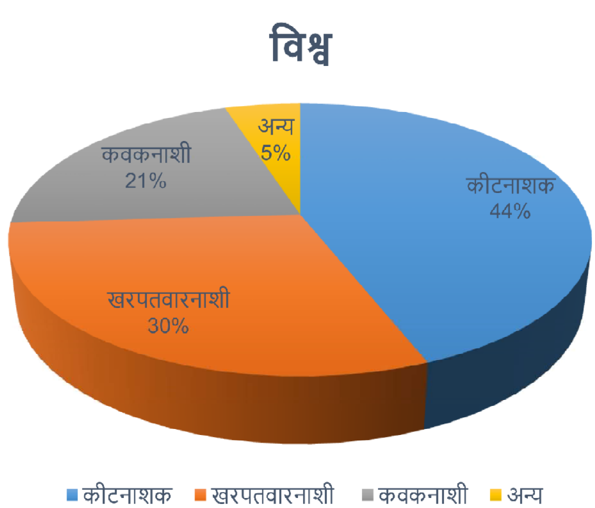

चित्र 1 (ख)

चित्र 1 (क), (ख) कीटनाशकों का उपयोग

कीटनाशकों का प्रभाव

1. मानव कीटनाशक विषाक्तता और बीमारियों के लिए सबसे अधिक कीमत चुकाई जा रही है- हाल ही में विश्व स्वास्थ्य संगठन और संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण समर्थक- ग्राम रिपोर्ट अनुमानित मानव कीटनाशक विषाक्तता के 1 मिलियन मामले हैं दुनिया में हर साल, और लगभग 20000 मौतें होती हैं।
2. हालाँकि विकासशील देश लगभग इसका ही उपयोग करते हैं सभी कीटनाशकों का लगभग 20% प्रयोग किया जाता है। दुनिया में सबसे ज्यादा कीटनाशक प्रेरित मौतें वहाँ होती हैं। अक्सर विकासशील देशों में अपर्याप्त व्यावसायिक और अन्य सुरक्षा, मानकों का अपर्याप्त प्रवर्तन, कीटनाशकों की खराब लेबलिंग, निरक्षरता, अपर्याप्त सुरक्षात्मक कपड़े हैं और श्रमिकों के लिए और सामान्य तौर पर कपड़े धोने की सुविधाएं कीटनाशकों के खतरे का अपर्याप्त ज्ञान हैं ।
3. कृषि रसायनों के व्यापक और अवैज्ञानिक उपयोग के परिणामस्वरूप खाद्य उत्पादों में कीटनाशक अवशेषों का स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। इंसानों और जानवरों के लिए यद्यपि कृषि का पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है दुनिया भर से रसायनों की सूचना मिलती है, प्रभाव तुलनात्मक रूप से अधिक होते हैं। विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में गंभीर खुलासा से स्वास्थ्य पर दीर्घकालिक और तीव्र प्रभाव पड़ता है।
4. उपचारित पौधों और मिट्टी से अपवाह के माध्यम से कीटनाशक सतही जल तक पहुँच सकते हैं कीटनाशकों द्वारा जल का संदूषण व्यापक है।

कीटनाशकों के सुरक्षित उपयोग के लिए कुछ आवश्यक सावधानियाँ

- डिब्बे में लगे लेबल को ध्यान से पढ़कर विषैलेपन की जानकारी रखनी चाहिए।
- कीट या खरपतवार नियंत्रण हेतु रसायन का छिड़काव तभी करना चाहिये जब फसल की उपज में नुकसान आर्थिक रूप से दिखाई दे।
- छिड़काव यंत्र के उपयोग की कार्य विधि को ठीक तरह से पढ़ लें तथा समस्या के अनुसार उचित छिड़काव नोजल का उपयोग करें।
- घोल बनाने से पहले हाथ में रबर के दस्ताने, पैरों में जूते, रबर का कोट, चश्मा व आवश्यक होने पर गैस मास्क पहन लेना चाहिए।

- घोल बनाने लिए लकड़ी का प्रयोग करना चाहिए एवं घाव वाला शरीर का कोई भी हिस्सा व पानी से अच्छी तरह धो लेने चाहिऐ।
- छिड़काव के बाद टैंक में बचे कीटनाशकों को खाली कर रसायन के सम्पर्क में न लाएँ। स्प्रेयर की नोजल को मुँह से साफ करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए।
- यह सुनिश्चित करें कि रसायन छिड़काव की जगह पर उपयुक्त सुरक्षात्मक कपड़े उपलब्ध रहें।
- रसायन छिड़काव के समय रक्षा हेतु शारीरिक सुरक्षात्मक कपड़े/उपकरण जैसे की आँख का उपकरण, दस्ताने, जूते/गम बूट, मास्क, एप्रन, कोट, इत्यादि आवरण इस्तेमाल करें।
- कृषि रसायन से काम में लेते समय यदि जहर का प्रभाव शरीर पर हो तो तुरन्त चिकित्सक के पास जाएँ तथा रसायन का डिब्बा व पत्रक भी साथ ले जाऐं।
- बंजर भूमि पर खोदे गए गड्डों में फेंक देना चाहिए।
- टैंक को कभी भी सिंचाई नहरों या तालाबों में खाली न करें।

निष्कर्ष

आधुनिकता की ओर अग्रसर कृषि परिवेश में कृषक फसल की अच्छी उपज के लिए उर्वरक, कीटनाशक दवाएँ व अन्य रासायनों का भरपूर उपयोग करते हैं। इनके प्रयोग में सावधानी बरतनी चाहिए नहीं तो यह साँस द्वारा, चमड़ी द्वारा या खाने के साथ शरीर में पहुँच कर कई समस्याएँ उत्पन्न कर देते हैं। कई रसायनों से हाथ व पैरों की चमड़ी में जलन होने लगती है, छाले या घाव हो जाते हैं। कुछ रसायन ऐसे भी होते हैं जिनमें से गैस निकलती है जो साँस के साथ शरीर के अन्दर जा सकती है व आँख, नाक व मुँह में जलन पैदा कर सकती है। इससे जी घबराना, बेहोशी व अधिक होने पर दम घुटने की शिकायत भी हो सकती है। मिट्टी के वातावरण में किसी कीटनाशक के भाग्य का आकंलन करने के लिए, व्यक्तिगत प्रक्रियाओं की गतिशीलता के साथ-साथ सभी प्रक्रियाओं के संयुक्त प्रभावों का भी आकंलन करना चाहिए। पर्यावरण में कीटनाशकों का भाग्य प्रतिधारण, परिवर्तन और परिवहन प्रक्रियाओं और इन प्रक्रियाओं की परस्पर क्रिया से नियंत्रित होता है। जिस तरह परिवर्तन प्रक्रियाएं यह तय करती हैं कि पर्यावरण में कीटनाशक कितने समय तक मौजूद रह सकते हैं, उसी तरह परिवहन प्रक्रियाएँ यह निर्धारित करती हैं कि कीटनाशक कहां मौजूद हो सकते हैं। चूँकि कीटनाशक डिजाइन के अनुसार जहरीले होते हैं, इसलिए पर्यावरण में उनकी उपस्थिति का मानव स्वास्थ्य और पर्यावरणीय गुणवत्ता पर पड़ने वाले प्रभाव पर स्वाभाविक चिंता है। किसी कीटनाशक का भाग्य कीट नियंत्रण के लिए इसकी उपलब्धता और प्रभावकारिता के साथ-साथ पर्यावरण में गैर-लक्ष्य जीवों और अन्य घटकों पर इसके संभावित प्रतिकूल प्रभावों को नियंत्रित करेगा।

जलवायु अनुकूल कृषि के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी का दोहन

पीयूष बबेले

रामानुजन फेलो, रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी

ई-मेलः piyoosh.rlbcau@gmail.com

सारांश

कृषि में जलवायु अनुकूलन तेजी से महत्वपूर्ण होता जा रहा है क्योंकि जलवायु परिवर्तन चरम मौसम की घटनाओं को बढ़ाता है और खाद्य सुरक्षा को खतरे में डालता है। जलवायु अनुकूलन सूखे, बाढ़ और बढ़ते तापमान सहित विभिन्न पर्यावरणीय परिवर्तनों का विरोध करने के लिए कृषि पद्धतियों को संशोधित करने पर केंद्रित है। कृषि प्रौद्योगिकियां कृषि क्षेत्र में जलवायु लचीलापन कैसे बढ़ा रहे हैं तथा जलवायु परिवर्तन के जोखिमों को कम करने और स्थिरता प्रथाओं को बढ़ाने में आधुनिक प्रौद्योगिकी के परिवर्तनकारी प्रभाव की खोज करना महत्वपूर्ण है। अधिक लचीले और टिकाऊ भविष्य के लिए अनुप्रयोगों को उजागर करना भी जरूरी है।

परिचयः

जलवायु संबंधी मुद्दों को हल करने के लिए अत्याधुनिक कृषि प्रौद्योगिकियों को शामिल करना आवश्यक है। सटीक खेती, सवज् सेंसर, AI-संचालित एनालिटिक्स और स्मार्ट सिंचाई प्रणालियों का उपयोग करने से संसाधन दक्षता बढ़ती है, पर्यावरणीय प्रभाव कम होता है और फसल लचीलापन बढ़ता है। इसके अलावा, नैनो-टेक्नोलॉजी तथा ओमिक्स डेटा के एकीकरण का उपयोग बेहतर पैदावार, रोग प्रतिरोधक क्षमता और तनाव सहनशीलता के साथ नई फसल किस्मों को विकसित करने के साथ-साथ फसल सुधार के लिए नए लक्ष्यों की पहचान करने के लिए किया जा सकता है। ये विकास स्थायी खाद्य उत्पादन, जोखिम शमन और जलवायु परिवर्तन के प्रति किसानों के अनुकूलन का समर्थन करते हैं। यहाँ हम जलवायु संबंधी खतरों के खिलाफ अपनी कृषि प्रणालियों को मजबूत करने के लिए आधुनिक कृषि प्रौद्योगिकी का उपयोग करने के रोमांचक क्षेत्र पर प्रकाश डाल रहे हैं, जो हमें एक स्थायी भविष्य की ओर ले जा सकते है।

कृषि में जलवायु अनुकूलन को समझना

लोगों, समुदायों, पारिस्थितिक तंत्रों और उद्योगों की जलवायु परिवर्तन के नकारात्मक प्रभावों का पूर्वानुमान लगाने, सहन करने, अनुकूलन करने और उनसे उबरने की क्षमता को जलवायु लचीलापन कहा जाता है। इसमें ऐसी नीतियों और प्रथाओं को लागू करना शामिल है जो चरम मौसम, बढ़ते तापमान, समुद्र के स्तर में वृद्धि और अन्य जैसी जलवायु संबंधी कठिनाईयों से निपटने की क्षमता में सुधार करती हैं। जलवायु परिवर्तन के बिगड़ते प्रभावों से आजीविका, खाद्य सुरक्षा, जैव विविधता और बुनियादी ढाँचे की रक्षा के लिए जलवायु अनुकूल कृषि महत्वपूर्ण है।

कृषि, जल प्रबंधन और शहरी डिजाइन सहित विभिन्न क्षेत्रों में लचीले उपायों का उपयोग करके समाज भेद्यता को कम कर सकते हैं, आर्थिक नुकसान को कम कर सकते हैं और सतत् विकास को बढ़ावा दे सकते हैं। इससे भावी पीढ़ियों के लिए अधिक सुरक्षित और टिकाऊ भविष्य सुनिश्चित होगा। पारम्परिक बढ़ते मौसमों के विघटन और चरम मौसम की घटनाओं की आवृत्ति में वृद्धि के कारण, जलवायु परिवर्तन का कृषि पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। बढ़ते तापमान, लंबे समय तक सूखे और भीषण गर्मी के कारण फसल की पैदावार कम हो गई है और खाद्य सुरक्षा खतरे में है। अप्रत्याशित वर्षा पैटर्न और अधिक बार आने वाली बाढ़, जो मिट्टी के कटाव और कम कृषि उत्पादकता का कारण बनती है, दुनिया भर में भोजन के उत्पादन और आपूर्ति के लिए कठिनाईयाँ प्रदान करती है।

जलवायु लचीलेपन के लिए कृषि प्रौद्योगिकी समाधान

1. मौसम पूर्वानुमान और जलवायु डेटा विश्लेषण

दैनिक योजना और निर्णय लेने में सहायता के लिए, मौसम पूर्वानुमान में तापमान, वर्षा और हवा के पैटर्न जैसे अल्पकालिक वायुमंडलीय चर का अनुमान लगाना शामिल होता है। पूर्वानुमान तैयार करने के लिए उपग्रहों, मौसम स्टेशनों और अन्य स्रोतों से मौसम संबंधी डेटा का विश्लेषण करने के लिए कंप्यूटर मॉडल का उपयोग किया जाता है।

हालाँकि, जलवायु परिवर्तनशीलता और परिवर्तन को समझने के लिए, जलवायु डेटा विश्लेषण दीर्घकालिक रुझानों और पैटर्न को देखता है। तापमान, वर्षा और अन्य जलवायु परिवर्तन में पैटर्न खोजने के लिए, जलवायु विज्ञानी ऐतिहासिक डेटा की जांच करते हैं। इस डेटा के उपयोग से, कृषि, जल संसाधन और शहरी नियोजन सहित कई उद्योग-जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को बेहतर

ढंग से समझ सकते हैं, इसके प्रभावों को कम करने के तरीके विकसित कर सकते हैं और ऐसी नीतियां बना सकते हैं जो जलवायु-लचीली हों।

2. प्रिसिशन (सटीक) खेती और स्मार्ट सिंचाई प्रणाली

सटीक खेती एक अत्याधुनिक कृषि पद्धति है जो जीपीएस, सेंसर और ड्रोन जैसी तकनीक का उपयोग करके फसल की उपज को अधिकतम करती है। किसान मिट्टी की स्थिति, मौजूद नमी की मात्रा और पौधों के स्वास्थ्य पर वास्तविक समय डेटा इकट्ठा करके सटीक रूप से उर्वरक, कीट नाशक और सिंचाई का प्रबंध कर सकते हैं। इससे बर्बादी कम होती है और उत्पादकता बढ़ती है।

इसी तरह की तकनीक का उपयोग स्मार्ट सिंचाई प्रणालियों द्वारा फसलों को उनकी आवश्यकताओं के आधार पर सटीक रूप से पानी देने, जल संसाधनों को संरक्षित करने और अपवाह को कम करने के लिए किया जाता है। ये अत्याधुनिक तकनीकें संसाधन दक्षता में सुधार करती हैं, पैदावार बढ़ाती हैं और टिकाऊ कृषि का समर्थन करती हैं, जो अंततः खाद्य सुरक्षा प्रदान करने और पर्यावरण की रक्षा करने में मदद करती है।

3. आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) के माध्यम से फसल की निगरानी और रोग का पता लगाना

फसल की निगरानी और बीमारी की पहचान के लिए उपग्रह इमेजिंग, ड्रोन और सेंसर सहित कई स्रोतों से डेटा का मूल्यांकन और विश्लेषण करने के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) और मशीन लर्निंग का उपयोग किया जाता है। एआई एल्गोरिदम प्रारंभिक चरण में फसलों में प्रवृत्तियों, विसंगतियों और बीमारी के लक्षणों की पहचान कर सकता है, जिससे किसानों को सिंचाई और उर्वरक स्तर में बदलाव या लक्षित कीट प्रबंधन करने जैसी त्वरित कार्रवाई करने में सक्षम बनाया जा सकता है। रसायनों के उपयोग को कम करके और संसाधन आवंटन को अधिकतम करके, यह तकनीक फसल के नुकसान को रोककर, उपज की भविष्यवाणी को बढ़ाकर और फसल के नुकसान को रोककर टिकाऊ कृषि प्रथाओं को बढ़ावा देने में सहायता करती है।

4. सतत मृदा और पोषक तत्व प्रबंधन

मिट्टी के स्वास्थ्य को संरक्षित करने, फसल उत्पादकता बढ़ाने और पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए मिट्टी और पोषक तत्वों के प्रबंधन के स्थायी तरीके आवश्यक हैं। मिट्टी की उर्वरता और संरचना में सुधार के लिए, यह रणनीति फसल चक्रण, कवर फसलें और कार्बनिक पदार्थों के समावेश जैसी तकनीकों का उपयोग करती है। पोषक तत्वों को सटीक रूप से लागू करके, खाद बनाकर और जैविक कचरे का पुनः उपयोग करके पोषक तत्वों के अपवाह और प्रदूषण को कम करें। किसान इन टिकाऊ प्रथाओं का उपयोग करके दीर्घकालिक मिट्टी की उत्पादकता सुनिश्चित कर सकते हैं, सिंथेटिक उर्वरकों पर अपनी निर्भरता कम कर सकते हैं और स्वस्थ मिट्टी में कार्बन का भंडारण करके जलवायु परिवर्तन को कम करने में मदद कर सकते हैं। मिट्टी की नमी सेंसर, रिमोट सेंसिंग और मौसम पूर्वानुमान जैसी तकनीकें सूखे के दौरान सिंचाई को प्रभावी ढंग से शेड्यूल करना संभव बनाती हैं।

5. कृषि में नैनोटेक्नोलॉजी के अभिनव प्रयोगः

नैनोटेक्नोल जी 1 से 100 नैनोमीटर के बीच नैनोस्केल पर संचालित तकनीक है। यह अत्यंत छोटी चीजों का विश्लेषण और एप्लीकेशन है। इसका उपयोग विज्ञान से सम्बंधित कई क्षेत्र, जैसे रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान, भौतिकी, मटीरियल विज्ञान और इंजीनियरिंग में किया जा सकता है। नैनो टेक्नोलॉजी अपने अत्यंत छोटे आकार के कारण कृषि के क्षेत्र में बहुआयामी लाभ लेकर आई है तथा खेती और किसानी में भी मदद करती है। यह अपने साथ नैनो बायोसेंसर, नैनो उर्वरक, नैनोट्यूब सिंचाई सुविधाएं, मृदा स्वास्थ्य सुधार के लिए नैनो ट्रीटमेंट प्रोसेसेज जैसे विभिन्न अनुप्रयोग लाई है। नैनो-ट्यूब, नैनो-बायोसेंसर जैसे नैनो सामग्री का उपयोग करके प्रिसिशन खेती में इसके उपयोग ने खेती में उत्पाद को बढोत्तरी दी है। खेती से सम्बंधित सबसे जरूरी पहलू जहाँ नैनो तकनीक लागू की जाती है, जैसेः- (1) नैनो-फर्टिलाइजर्स और कीटनाशक वितरण। (2) मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार के लिए आर्गेनिक फर्टिलाइजर्स के साथ नैनोकणों की धीमी और निगरानी में किया गया रिलीज। (3) फसल उत्पादकता बढ़ाने के लिए

नैनोस्केल पर आनुवंशिक संशोधन। (4) रोगजनकों और अन्य रोग पैदा करने वाले वायरस और बैक्टीरिया का तेजी से पता लगाने के लिए नैनो बायोसेंसर का उपयोग।

फसलों, फलों और सब्जियों के जेनेटिक मैनीपुलेशन के लिए नैनो बायोरेमेडिएशन और नैनोफाइबर अभी भी रिसर्च और डेवलपमेंट के दायरे में हैं। आर्गेनिक खेती और जेनेटिकली मॉडिफाइड खेती का अभ्यास करने वाले किसानों को इसने एक आशाजनक भविष्य की राह दिखाई है। नैनो-जैव प्रौद्योगिकी भारत सरकार के लिए एक महत्वपूर्ण क्षेत्र रहा है जिसने 2007 में एक राष्ट्रीय नैनो मिशन शुरू किया था जो विभिन्न क्षेत्रों में नैनो प्रौद्योगिकी के उपयोग को देखता है। कृषि नैनोटेक्नोलॉजी का उपयोग करके टिकाऊ खेती के लिए तैयार की गई कुछ रणनीतियाँ हैं:- (1) नैनोकणों का नियंत्रित हरित संश्लेषण। (2) जड़ एंडोफाइट्स और माइकोरिजल कवक द्वारा उत्पादित नैनोकणों की समझ, जो पौधों की उत्पादकता और रोग प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। (3) पादप प्रणाली के साथ नैनोकणों की अंतःक्रिया जैसे पादप शरीर के अंदर नैनोकणों का परिवहन तंत्र। (4) विभिन्न पर्यावरणीय स्थितियों पर नैनोकणों के नकारात्मक दुष्प्रभावों का आलोचनात्मक मूल्यांकन। (5) मिट्टी, पौधों, पानी और कीटनाशकों के त्वरित विश्लेषण के लिए पोर्टेबल और उपयोगकर्ता के अनुकूल नैनोबायोसेंसर का विकास।

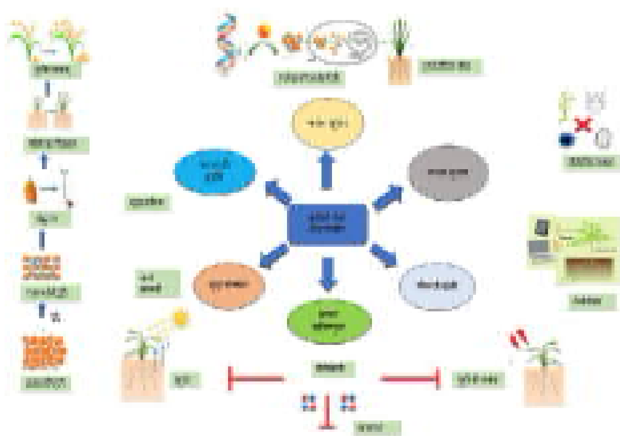

6. नवप्रवर्तन के लिए मल्टी-ओमिक्स तथा सिस्टम जीव विज्ञान का एकीकरण

फसल पादप प्रजनन में ओमिक्स डेटा के एकीकरण से नई फसल किस्मों के विकास में जबरदस्त प्रगति हुई है, जिनमें उपज में वृद्धि, रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार और पोषण मूल्य में वृद्धि जैसे वांछनीय गुण हैं। विभिन्न डेटाबेस से विविध ओमिक्स डेटासेट का एकीकरण पौधों के लक्षणों को प्रभावित करने वाली अंतर्निहित जैविक प्रक्रियाओं और इंटरैक्शन की व्यापक समझ प्रदान करता है। मशीन लर्निंग एल्गोरिदम और मल्टी-ओमिक्स डेटा एकीकरण ओमिक्स डेटा का विश्लेषण और व्याख्या करने के लिए शक्तिशाली उपकरण के रूप में उभरे हैं, जो पूर्वानुमानित मॉडल के विकास को सक्षम बनाता है जो प्रजनन प्रक्रिया को तेज कर सकता है और पारंपरिक प्रजनन विधियों के लिए आवश्यक समय और संसाधनों को कम कर सकता है। ये मॉडल वांछनीय लक्षणों में अंतर्निहित आनुवंशिक कारकों की पहचान कर सकते हैं और विशिष्ट पर्यावरणीय परिस्थितियों में विभिन्न किस्मों के प्रदर्शन की भविष्यवाणी कर सकते हैं, जिससे पौधों के अधिक कुशल और प्रभावी चयन और क्रॉसिंग की अनुमति मिलती है।

हालाँकि, ओमिक्स डेटा का एकीकरण कई चुनौतियों का सामना करता है, जिसमें विभिन्न ओमिक्स प्रौद्योगिकियों द्वारा उत्पन्न डेटा की विशाल मात्रा, कई ओमिक्स डेटा सेटों को एकीकृत करने की जटिलता और इन डेटा का विश्लेषण और व्याख्या करने के लिए उन्नत सिस्टम जीव विज्ञान, कम्प्यूटेशनल टूल और विशेषज्ञता की आवश्यकता शामिल है। इसके अतिरिक्त, फसल प्रजनन में ओमिक्स डेटा के उपयोग से जुड़े नैतिक और सामाजिक विचारों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। वांछनीय गुणों वाली नई फसल किस्मों का विकास पर्यावरण, स्थानीय समुदायों और व्यापक कृषि प्रणाली पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकता है। इसलिए, पारदर्शी और समावेशी निर्णय लेने की प्रक्रिया जिसमें किसानों, उपभोक्ताओं और नीति निर्माताओं सहित सभी हितधारक शामिल हों, आवश्यक हैं।

ग्रामीण समुदायों तक कृषि प्रौद्योगिकियों का विस्तार

प्रौद्योगिकी की सामर्थ और पहुँच इस बात के महत्वपूर्ण निर्धारक हैं कि इसे विभिन्न उद्योगों में कैसे अपनाया जाता है। पारंपरिक और आधुनिक कृषि पद्धतियों को सफलतापूर्वक एकीकृत करने के लिए आजमाए हुए और सच्चे कृषि ज्ञान और अत्याधुनिक तकनीक और प्रक्रियाओं के संयोजन की आवश्यकता होती है। किसान सटीक खेती, सिंचाई और फसल प्रबंधन में समकालीन विकास के साथ क्षेत्रीय पारिस्थितिकी तंत्र और टिकाऊ प्रथाओं के पारंपरिक ज्ञान को जोड़कर उत्पादन बढ़ा सकते हैं, संसाधनों को बचा सकते हैं और भविष्य के लिए टिकाऊ कृषि को बढ़ावा दे सकते हैं। यदि किसान कृषि पद्धतियों और उत्पादन में सुधार करना चाहते हैं तो उन्हें प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहिए और अपने कौशल का विस्तार करना चाहिए। कार्यशालाएँ, पाठ्यक्रम और विस्तार कार्यक्रम छात्रों को खेती और प्रौद्योगिकी के अत्याधुनिक तरीकों के साथ-साथ समकालीन अभ्यास की शिक्षा देते हैं। किसानों को आवश्यक ज्ञान और कौशल देकर, हम ग्रामीण विकास में मदद कर सकते हैं, साथ ही किसानों को बदलती परिस्थितियों के अनुकूल ढलने, पैदावार

बढ़ाने और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में भी सक्षम बना सकते हैं।

डिजिटल युग में लोगों और समुदायों को सशक्त बनाने के लिए सुलभ जानकारी प्रणाली और डिजिटल साक्षरता को बढ़ावा देना महत्वपूर्ण है। इसमें डिजिटल प्रौद्योगिकियों, इंटरनेट और सूचना संसाधनों का उपयोग करने के बारे में निर्देश और प्रशिक्षण देना शामिल है। लोग अपनी डिजिटल साक्षरता में सुधार करके महत्वपूर्ण ज्ञान, शैक्षिक संसाधनों और नौकरी की संभावनाओं तक पहुँच प्राप्त कर सकते हैं। यदि डिजिटल विभाजन समाप्त हो जाए तो हर कोई वैश्विक सूचना अर्थव्यवस्था में भाग लेने, बुद्धिमानीपूर्ण निर्णय लेने और अपने जीवन की सामान्य गुणवत्ता में सुधार करने में सक्षम होगा। क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण कार्यक्रमों का उद्देश्य लोगों और संगठनों की क्षमताओं, कौशल और ज्ञान में सुधार करना है। ये पाठ्यक्रम परियोजना प्रबंधन, तकनीकी दक्षता और नेतृत्व सहित कई विषयों में विशेष निर्देश प्रदान करते हैं। क्षमता निर्माण व्यक्तिगत और व्यावसायिक प्रगति को प्रोत्साहित करता है, संस्थानों को मजबूत करता है और प्रतिभागियों को महत्वपूर्ण संसाधन और जानकारी प्रदान करके सतत विकास को बढ़ावा देता है। ये कार्यक्रम समुदायों को सशक्त बनाने के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं, जिससे वे मुद्दों को सफलतापूर्वक संबोधित कर सकें और अपने संबंधित उद्योगों में अच्छे बदलाव को बढ़ावा दे सकें।

निष्कर्ष:

जलवायु परिवर्तन के कारण उत्पन्न समस्याओं से निपटने और टिकाऊ कृषि को आगे बढ़ाने के लिए एक विविध रणनीति की आवश्यकता है जो अत्याधुनिक तकनीकों का उपयोग करे और लोगों को सशक्त बनाए। किसान कृषि प्रौद्योगिकियों समाधानों को एकीकृत करके जलवायु लचीलेपन को बढ़ावा दे सकते हैं, संसाधन प्रबंधन को अनुकूलित कर सकते हैं और फसल उत्पादन बढ़ा सकते हैं। किसानों की क्षमता बढ़ाने और उन्हें बदलते परिवेश के अनुरूप ढलने और टिकाऊ प्रथाओं का उपयोग करने के लिए आवश्यक प्रशिक्षण और ज्ञान प्रदान करने की पहल भी महत्वपूर्ण है। सूचना उपलब्धता बढ़ाने और डिजिटल अन्तर को पाटने से समुदायों को अधिक शक्ति मिलती है और समावेशी विकास को समर्थन मिलता है। फसल पादप प्रजनन में नैनोटेक्नोलॉजी तथा ओमिक्स डेटा का एकीकरण फसल उत्पादकता बढ़ाने और वैश्विक खाद्य सुरक्षा में सुधार की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। ओमिक्स डेटा के एकीकरण से जुड़ी चुनौतियों का समाधान करने के लिए कृषि क्षेत्र के शोधकर्ताओं, नीति निर्माताओं और हितधारकों के बीच सहयोग और समन्वय की आवश्यकता होगी। फसल प्रजनन में ओमिक्स डेटा एकीकरण के लाभ बहुत अधिक हैं, और यह आवश्यक है कि मानवता की भलाई के लिए इन प्रौद्योगिकियों का लाभ उठाने के प्रयास किए जाएं। कृषि और समग्र रूप से पृथ्वी के लिए अधिक टिकाऊ और लचीले भविष्य का रहस्य इन विचारों को संयुक्त रूप से अपनाने में निहित है।

सूक्ष्मजीवों की प्रचुरता से ही मृदा जीवाश्म में बढोत्तरी

उमेश पंकज
शिक्षण सह अनुसंधान सहयोगी, सूक्ष्मजैव विज्ञान, रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, (उ.प्र.)
ई-मेलः umeshpankaj55@gmail.com

सूक्ष्मजीवों द्वारा मृदा कार्बनिक पदार्थ का निर्माण

यह सर्वविदित है कि औद्योगिक क्रांति के बाद से मानव गतिविधि के परिणामस्वरूप वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) और अन्य ग्रीनहाउस गैसों (GHG) के निरंतर इनपुट से वायुमंडलीय सांद्रता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। जिसके परिणामस्वरूप पृथ्वी की जलवायु तेजी से बदल रही है। इस बात की शायद कम सराहना की जाती है कि प्राकृतिक और प्रबंधित मिट्टी वायुमंडलीय CO_2 के लिए एक महत्वपूर्ण स्रोत और सिंक हैं। मिट्टी में कार्बन की मात्रा ग्रह के स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र में पाए जाने वाले कार्बन के एक बड़े हिस्से का प्रतिनिधित्व करती है। स्थलीय पारिस्थितिक तंत्र में कुल कार्बन लगभग 3170 गीगाटन (1 जीटी = 1 पेटाग्राम = 1 अरब मीट्रिक टन) है। इस मात्रा का लगभग 80% (2500 जीटी) मिट्टी में पाया जाता है। मृदा कार्बन या तो कार्बनिक (1550 जीटी) या अकार्बनिक कार्बन (950 जीटी) हो सकता है। उत्तरार्द्ध में मौलिक कार्बन और कार्बोनेट सामग्री जैसे कैल्साइट, डोलोमाइट और जिप्सम शामिल हैं। जीवित पौधों और जानवरों में पाए जाने वाले कार्बन की मात्रा मिट्टी में पाए जाने वाले (560 जीटी) की तुलना में अपेक्षाकृत कम है। मृदा कार्बन पूल 800 जीटी के वायुमंडलीय पूल से लगभग 3.1 गुना बड़ा है। केवल महासागर में लगभग 38,400 जीटी सी का बड़ा कार्बन पूल है, जो ज्यादातर अकार्बनिक रूपों में है। मृदा कार्बनिक पदार्थ बैक्टीरिया और कवक सहित मिट्टी के रोगाणुओं, पौधों और जानवरों के ऊतकों जैसे एक बार जीवित जीवों की सड़ने वाली सामग्री, मल सामग्री और उनके अपघटन से बने उत्पादों से बना होता है। मृदा कार्बनिक पदार्थ कार्बनिक यौगिकों से बना होता है जो कार्बन में अत्यधिक समृद्ध होते हैं। मृदा कार्बनिक कार्बन (एस.ओ.सी.) का स्तर सीधे मिट्टी में निहित कार्बनिक पदार्थ की मात्रा से संबंधित है। मृदा कार्बनिक कार्बन का स्तर कई पारिस्थितिक तंत्र प्रक्रियाओं की परस्पर क्रिया के परिणामस्वरूप होता है, जिनमें प्रकाश संश्लेषण, श्वसन और अपघटन प्रमुख हैं। प्रकाश संश्लेषण वायुमंडलीय CO_2 का पादप बायोमास में स्थिरीकरण है। मृदा कार्बनिक कार्बन इनपुट दर मुख्य रूप से एक पौधे की जड़ बायोमास द्वारा निर्धारित की जाती है, लेकिन इसमें पौधे की टहनियों से जमा कूड़ा भी शामिल होता है। मृदा कार्बन सीधे तौर पर पौधों की जड़ों की वृद्धि और मृत्यु के साथ-साथ अप्रत्यक्ष रूप से जड़ों से मिट्टी के सूक्ष्मजीवों में कार्बन-समृद्ध यौगिकों के स्थानांतरण से उत्पन्न होता है। उदाहरण के लिए, कई पौधे अपनी जड़ों और मिट्टी में माइकोराइजा नामक विशेष कवक के बीच सहजीवी संबंध बनाते हैं, जड़ें कवक को कार्बन के रूप में ऊर्जा प्रदान करती हैं जबकि कवक पौधे को फ स्फोरस जैसे अक्सर सीमित पोषक तत्व प्रदान करते हैं। मिट्टी के सूक्ष्मजीवों द्वारा बायोमास के अपघटन के परिणामस्वरूप माइक्रोबियल श्वसन के कारण मिट्टी से CO_2 के रूप में कार्बन की हानि होती है, जबकि मूल कार्बन का एक छोटा सा हिस्सा ह्यूमस के निर्माण के माध्यम से मिट्टी में बरकरार रहता है, जो एक ऐसा उत्पाद जो अक्सर कार्बन युक्त मिट्टी को उनकी विशेषता देता है जिसका रंग गेहरा होता है (चित्र 1)। ह्यूमस अत्यधिक जटिल होता है, और अपघटन के प्रति यह प्रतिरोध मिट्टी में लंबे समय तक रहने का कारण बनता है। पौधे का मलबा कम जटिल होता है, जिसके परिणामस्वरूप मिट्टी में रहने का समय बहुत कम हो जाता है। अन्य पारिस्थितिकी तंत्र प्रक्रियाएं जो कार्बन हानि का कारण बन सकती हैं उनमें मिट्टी का क्षरण और भूजल में घुले कार्बन का रिसाव

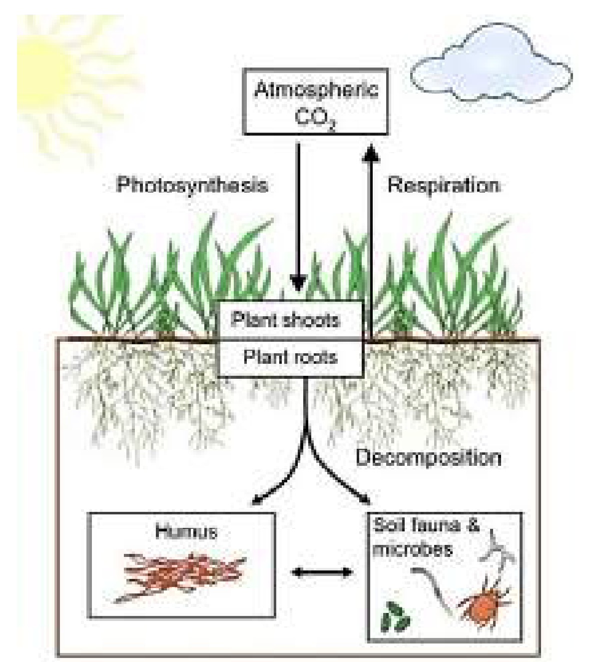

चित्र 1. मृदा जीवों और सूक्ष्मजीवों द्वारा जड़ों और जड़ उत्पादों के अपघटन से ह्यूमस उत्पन्न की पृक्रिया, जो मृदा कार्बनिक कार्बन का एक दीर्घकालिक भंडार है जिसे प्रकाश संश्लेषण से कार्बन इनपुट और श्वसन द्वारा कार्बन हानि को नियंत्रित किया जाता है।

शामिल है। जब कार्बन इनपुट और आउटपुट एक दूसरे के साथ संतुलन में होते हैं, तो मृदा कार्बनिक कार्बन स्तर में कोई शुद्ध परिवर्तन नहीं होता है। जब प्रकाश संश्लेषण से कार्बन इनपुट सी हानि से अधिक हो जाता है, तो समय के साथ मिट्टी में कार्बनिक कार्बन का स्तर बढ़ जाता है।

सूक्ष्मजीवों एवं मृदा कार्बनिक पदार्थ की कृषि में उपयोगिताः

मृदा सूक्ष्मजीव समुदाय की गतिशीलता को समझना उनके वितरण, संरचना और बहुतायत को जानना अति-महत्वपूर्ण है। मृदा मे बैक्टीरिया की संख्या (108-109 number/g मृदा नमूना) कवक आबादी (105-106 number/g मृदा नमूना) की तुलना में लगभग 100 गुना अधिक है। हालाँकि, अधिकांश मृदा सूक्ष्मजीव अभी भी अज्ञात हैं, और उनके कार्य अच्छी तरह से ज्ञात नहीं हैं। सूक्ष्मजीवों की संख्या का कुछ भाग पौधों के विकास को बढ़ावा देने की क्षमता रखते है जो निरंतर पौधो के जड़ो सूक्ष्मजीव उत्पादों का श्राव करते है। इस प्रकार के बैक्टीरिया को पौधे के विकास को बढ़ावा देने वाले राइजोबैक्टीरिया (PGPR) या पौधे के विकास को बढ़ावा देने वाले बैक्टीरिया (PGPB) के रूप में जाना जाता है। सूक्ष्मजीव की कुछ आबादी कार्बन और पोषक तत्वों के मध्यस्थ होते हैं और मिट्टी में अजैविक स्थितियों के साथ प्रतिक्रिया करके, वे ह्यूमस का निर्माण करते हैं। सूक्ष्मजीव जैव-भू-रासायनिक चक्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और मिट्टी के कार्यों, विशेष रूप से मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ के अपघटन और पोषक तत्व (जैसे नाइट्रोजन व फॉस्फोरस) चक्रण के लिए आवश्यक हैं, और इस प्रकार महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएं प्रदान करते हैं। पौधों के जड़ क्षेत्र में नाइट्रोजन का स्थिरीकरण और प्रकाश संश्लेषण और श्वसन में पौधे का सेलुलर चयापचय भी ह्यूमस से प्रभावित होता है।

परिभाषा के अनुसार, मृदा कार्बनिक पदार्थ (SOM) जीवित बायोटा, मुख्य रूप से सूक्ष्मजीवों और निर्जीव कार्बनिक पदार्थों (पौधे, पशु और माइक्रोबियल मूल के ताजा और आंशिक रूप से विघटित अवशेष) का एक विषम मिश्रण है। प्रमाण हैं कि सूक्ष्मजीवों से प्राप्त सतत मृदा कार्बनिक पदार्थ पौधों के अवशेषों की तुलना में स्थिर मृदा कार्बनिक पदार्थ पूल में बड़ा योगदान देता है। यह मृदा कार्बन पानी और ऑक्सीजन को पौधों की जड़ों तक पहुँचने और पोषण देने की मदद करता है। कार्बनिक पदार्थ महत्वपूर्ण पोषक तत्वों को मिट्टी से बाहर निकलने से रोकते तथा स्वस्थ सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता को बढ़ाता है, जो बदले में स्वस्थ पौधों को बढ़ावा देता है। वही ह्यूमस में कई पोषक तत्व खनिज होते हैं जो मिट्टी के स्वास्थ्य, जल धारण क्षमता को बढ़ाकर उर्वरता में सुधार करते हैं। स्वस्थ मिट्टी की स्थिति के लिए कार्बन महत्वपूर्ण है, और ह्यूमस लगभग 60 प्रतिशत कार्बन है। छह अतिरिक्त आवश्यक पोषक तत्व हैं जिनकी पौधों को उनकी मिट्टी में आवश्यकता होती हैः फॉस्फोरस, पोटेशियम, मैग्नीशियम, सल्फर, कैल्शियम और नाइट्रोजन। नाइट्रोजन छह में से सबसे महत्वपूर्ण में से एक है जो हर पौधे की जरूरत होती है। ह्यूमस भी मिट्टी की संरचना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आदर्श मिट्टी में ह्यूमस शामिल होता है और इसकी संरचना दानेदार, भुरभुरी होती है। यह ऑक्सीजन और कार्बन को पूरी मिट्टी में स्थानांतरित करने और पौधों की जड़ों को पोषण देने मे सहायता करता है। चिकनी मिट्टी अत्यधिक सघन होती है और इसमे खनिज कणों के बीच न्यूनतम स्थान होता है, जिसमे ह्यूमस को डालने से मिट्टी को भुरभुरी बनावट देता है। रेतीली मिट्टी में, ह्यूमस नमी व पोषक तत्वों के स्तर को बनाए रखने में मदद करता है।

निष्कर्षः

सूक्ष्मजीव जैव-रासायनिक चक्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं एवं मृदा की क्रिया शीलता के लिए उपयोगी होते है, विशेष रूप से मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ के अपघटन और पोषक तत्वों (जैसे नाइट्रोजन और फॉस्फोरस) के चक्रण के लिए आवश्यक हैं। और इस प्रकार सूक्ष्मजीव महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएँ प्रदान करते हैं। सूक्ष्मजीवों की अधिकता का मृदा कार्बन से सीधे तौर पर परस्पर संबंध है जो पौधों की जड़ों की वृद्धि व अन्य जीवों की प्रचुरता तथा -रासायनिक प्रक्रियाओं के लिए भी महत्वपूर्ण है।

Swachh Bharat Abhiyan

स्वच्छ भारत

एक कदम स्वच्छता की ओर

रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय
झाँसी-284003 (उ.प्र.) भारत

PARAMPARAGAT
KRISHI VIKAS YOJANA
ORGANIC FARMING GAINS MOMENTUM

आत्मनिर्भर
भारत
अभियान